आई.एस.एस.एन. 2230—7044 पुलिस विज्ञान

वर्ष - 34 अंक 134 जनवरी-मार्च, 2016

वर्ष - 34 अंक 134 जनवरी-मार्च, 2016

पुलिस विज्ञान

(त्रैमासिक पत्रिका)
जनवरी-मार्च, 2016

सलाहकार समिति

आर.के. किणि ए.
महानिदेशक

डा. निर्मल कुमार आजाद
महानिरीक्षक (प्रशा.)

बी.एस. जायसवाल
उप महानिरीक्षक (एस. एंड पी.)

संपादक : **दिवाकर शर्मा**

पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो
ब्लाक-11, 3 एवं 4 मंजिल
सी.जी.ओ. काम्पलैक्स, लोदी रोड
नई दिल्ली-110003

'पुलिस विज्ञान' में प्रकाशित लेखों में लेखकों के विचार निजी हैं।
इनसे पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली की सहमति आवश्यक नहीं।

संपादकीय

पुलिस विज्ञान त्रैमासिक पत्रिका का जनवरी-मार्च, 2016 का अंक पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है। जैसा कि संपादक मंडल का यह प्रयास रहता है कि पत्रिका में पुलिस, न्यायालयिक विज्ञान व अन्य संबंधित विषयों की प्रामाणिक व प्रासंगिक जानकारी प्रदान की जाए। अतः अपराधों को सुलझाने में पुलिसकर्मियों द्वारा किस प्रकार की कार्य-प्रणाली अपनाई जाए, अपराधों से निपटने तथा अपराध होने की संभावनाओं से संबंधित कुछ ओजस्वी विचार तथा प्रेस की भूमिका पर वरिष्ठ पुलिस अधिकारियों तथा समाज के कुछ प्रबुद्ध वर्ग द्वारा प्रस्तुत किए जाते हैं जो आम पुलिसकर्मी के साथ सभी वर्ग के लिए उपयोगी होते हैं।

इस अंक में इस बार पुलिस-कर्मियों के लिए **कितनी कारगर है भारतीय कारागार प्रणाली?, पुलिस से भय आखिर क्यों?, वीडियो पाइरेसी के अभियोगों में कार्रवाई संबंधी दिशा-निर्देश, अपराधोन्मूलन में पुलिस का दायित्व, लाल बत्ती पर रोक, दस्तावेजों/ अंगुलचिह्नों और मौका-ए-वारदात के दृश्यों की फोटोग्राफी, विश्व पुलिस की भूमिका इंटरपोल क्या है? साइबर अपराध : कानून और पुलिस** से संबंधित लेख हैं। पत्रिका के सुधी पाठक पत्रिका को और अधिक सूचनाप्रद व उपयोगी बनाने में अपना सक्रिय सहयोग प्रदान कर सकते हैं। आशा है कि पत्रिका में सम्मिलित सभी लेख पाठकों को उपयोगी लगेंगे और वे अपने विचारों से संपादक मंडल को अवगत कराते रहेंगे। आपके विचारों का सहर्ष स्वागत है।

दिवाकर शर्मा
संपादक

वर्ष - 34 अंक 134 जनवरी-मार्च, 2016

समीक्षा समिति के सदस्य

प्रो. एम.जैड. खान, नई दिल्ली
श्री एस.वी.एम. त्रिपाठी, लखनऊ
प्रो. अरुणा भारद्वाज, नई दिल्ली
प्रो. जे.डी. शर्मा, सागर (म.प्र.)
प्रो. स्नेहलता टंडन, नई दिल्ली
डा. दीप्ति श्रीवास्तव, भोपाल
प्रो. वी.के. कपूर, जम्मू
डा. शैलेंद्र कुमार चतुर्वेदी, मेरठ
डा. अरविंद तिवारी, मुंबई
डा. उपनीत लल्ली, चंडीगढ़
श्री वी.वी. सरदाना, फरीदाबाद
श्री सुनील कुमार गुप्ता, नई दिल्ली

अनुक्रम

कितनी कारगर है भारतीय कारागार प्रणाली?
• *डा. सुरेंद्र कटारिया* ---------- *7*

पुलिस से भय आखिर क्यों?
• *राकेश चक्र* ---------- *12*

वीडियो पाइरेसी के अभियोगों में कार्रवाई संबंधी दिशा-निर्देश
• *अरुण कुमार पाठक* ---------- *29*

अपराधोन्मूलन में पुलिस का दायित्व
• *प्रो. मृत्युंजय उपाध्याय* ---------- *32*

लाल बत्ती पर रोक
• *डा. बसंतीलाल बाबेल* ---------- *35*

दस्तावेजों/अंगुलचिह्नों और मौका-ए-वारदात के दृश्यों की फोटोग्राफी
• *श्रीमती बृजबाला ठाकुर* ---------- *36*

विश्व पुलिस की भूमिका इंटरपोल क्या है?
• *कैलाशनाथ गुप्त* ---------- *42*

साइबर अपराध : कानून और पुलिस
• *डा. इन्द्रेश कुमार मिश्र* ---------- *45*

'पुलिस विज्ञान' में प्रकाशित लेखों में लेखकों के विचार निजी हैं। इनसे पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली की सहमति आवश्यक नहीं।

कवर डिजायन : राहुल कुमार

अक्षरांकन एवं पृष्ठ सज्जा : ओम प्रकाशन, डी-46, विवेक विहार (भूतल), दिल्ली-110095

कितनी कारगर है भारतीय कारागार प्रणाली ?

डा. सुरेन्द्र कटारिया, प्रोफेसर (लोक प्रशासन)
81/91, नीलगिरी मार्ग, मानसरोवर, जयपुर-20

किसी भी आधुनिक एवं सभ्य समाज में कानून–व्यवस्था की स्थिति नियंत्रित बनाए रखने हेतु 'विधि के शासन' के साथ-साथ उन नियामकीय संस्थाओं का कुशल एवं प्रभावशाली होना अत्यावश्यक है जो इस कार्य हेतु निर्मित की गई हैं। पुलिस, न्यायालय तथा कारागार इसी श्रेणी की संस्थाएं हैं। भारत में कारागारों की स्थिति का जायजा लेने हेतु कतिपय उदाहरणों को दृष्टिगत करते हैं–

1. देश की हाईटेक तथा संवेदनशील मानी जाने वाली अहमदाबाद की साबरमती जेल में जनवरी-फरवरी, 2013 में उन 14 कैदियों ने 'एल' आकार की 16 फीट गहरी, 214 फीट लंबी तथा 1.5 फीट चौड़ी सुरंग खोद डाली, जो कि अहमदाबाद सहित देशभर में सिलसिलेवार बम धमाकों के आरोपी थे। सन् 1895 में बनी यह जेल सदैव से ही चर्चा का विषय रही है। शौचालय के पीछे इस सुरंग को प्रतिदिन सुबह 8–11 फीट तक खोदा जाता था तथा कंबल, चादर, मिट्टी एवं घास से ढक दिया जाता था। विडंबना यह है कि जेल प्रशासन को पता था कि बंदियों में कर्नाटक का सिविल इंजीनियर हाफिज हुसैन भी सम्मिलित है जो अपने शातिर दिमाग का दुरुपयोग कर सकता है। मजेदार बात यह है कि इस सुरंग का पता लगाने वाले सूबेदार गोविंद मूलजी लकुम को महज 100 रुपए का ईनाम दिया गया, क्योंकि सन् 1960 में बनी गुजरात की जेल मैनुअल इतना ही प्रावधान करती है।

2. दूसरी घटनाएं वे हैं जो जेलों के हिंसात्मक एवं हथियारमय हो रहे वातावरण का परिदृश्य प्रस्तुत करती हैं। 26 जनवरी, 2014 को राजस्थान के सीकर की जेल में ही एक अपराधी ने दूसरे हिस्ट्रीशीटर पर उस समय गोलियां बरसा दी थी जब गणतंत्र दिवस पर झंडारोहण के बाद कैदियों को बैरकों से निकाल कर मिठाई वितरित की जा रही थी। दूसरी ओर बीकानेर जेल में एक बंदी ने ईंटें मार–मार कर तीन कैदियों की हत्या (28 जून, 2013) को कर दी थी तो जनवरी, 2014 में पंजाब की पटियाला जेल में कैदियों से मोबाइल चार्जर तथा बैटरी जब्त करने पर कैदियों ने जेल अधीक्षक पर हमला कर दिया। एक दुःखद तथ्य यह भी है कि अच्छे चाल-चलन के आधार पर जिन कैदियों को खुली जेल में रखा जा रहा है वहां भी हिंसा पनप रही है। राजस्थान की जैतसर (श्रीगंगानगर) खुली जेल के प्रहरी की जून, 2013 में हत्या हो चुकी है। उदयपुर के केंद्रीय कारागार में जुलाई, 2013 में दुष्कर्म के एक आरोपी विचाराधीन कैदी का हाथ–पैर बंधा शव बाथरूम में लटका मिला था।

3. तीसरी श्रेणी में वे घटनाएं हैं जो विचाराधीन या सजाप्राप्त कैदियों द्वारा जेलों में की जाने वाली आत्महत्याओं से संबंधित हैं। दिसंबर, 2012 में हुए दिल्ली सामूहिक बलात्कार दुष्कर्म के मुख्य आरोपी रामसिंह ने तिहाड़ जेल में फंदे पर लटक कर आत्महत्या की थी। सवा साल में तिहाड़ में यह तीसरी घटना थी। फरवरी, 2014 में उदयपुर केंद्रीय जेल में भी एक महिला कैदी ने फांसी लगा ली थी। वह अपनी बेटी को छेड़ने वाले युवक की हत्या की आरोपी थी।

भारत में देशभर की जेलें कैदियों की विपुल संख्या, अमानवीय बर्ताव, हिंसक वातावरण तथा संसाधनों की भारी कमी से ग्रस्त हैं। जब चाहे कैदी जेल तोड़कर भाग जाते हैं तो कभी सुरंग खोद कर व्यवस्था का खोखलापन सामने लाते हैं। लाख प्रयासों के उपरांत भी कैदियों के पास हथियार, मोबाइल फोन, नशीली दवाएं तथा वी.आई.पी. सुविधाएं पाई जाती हैं। हमारी जेलों में सजा प्राप्त कैदियों से अधिक वे विचाराधीन कैदी बंद हैं जो

कभी 'वकीलों का स्वर्ग' कहलाने वाली भारतीय न्यायपालिका को तो कभी अपनी किस्मत को कोसते हैं। 'सुधारात्मक प्रशासन' के नाम पर प्रवर्तित कारागार प्रणाली खुद सुधारों की गुहार लगा रही है।

आंकड़ों के दर्पण में भारतीय कारागार तंत्र

राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो द्वारा जारी प्रिजन स्टेटिस्टिक्स इंडिया, 2012 के अनुसार देश में कुल 1394 जेलें हैं जिनमें 127 केंद्रीय जेलें, 34 जिला जेलें, 806 उप जेलें, 20 महिला जेलें, 46 खुली जेलें, 21 बोर्स्टल स्कूल, 31 विशेष जेलें तथा 3 अन्य जेलें सम्मिलित हैं। इनमें क्रमशः 1,46,648 (42.7%), 1,26,110 (36.7%) 18,474 (14.1%), 4,817 (1.4%), 4,028 (1.2%), 2,438 (0.7%), 10,331 (3.0%) तथा 323 (0.1%) कैदी क्षमता है। इस प्रकार देश की समस्त जेलों में 3,43,169 कैदी रह सकते हैं जबकि 31 दिसंबर, 2012 को इन जेलों में 3,85,135 अर्थात् 112% कैदी रह रहे थे। विगत कई वर्षों से यही स्थिति बनी हुई है। सबसे दुःखद पक्ष यह है कि कुल कैदियों में 66.2% (2,54,857) विचाराधीन कैदी थे जबकि 33.2% (1,27,789) सजा प्राप्त कैदी थे। अतः कहा जा सकता है कि न्यायिक तंत्र की शिथिलता के चलते बहुत से व्यक्ति अनावश्यक रूप से जेलों में बंद हैं। सन् 1958 में बनी तिहाड़ जेल की क्षमता शुरुआत में मात्र 1273 कैदियों की थी जो अब छः हजार की है लेकिन यहां प्रायः 12 हजार कैदी बंद रहते हैं। जेलों में छत्तीसगढ़ में सर्वाधिक 252% भीड़ है जो दिल्ली में यही आंकड़ा 194% है।

राजस्थान में जुलाई-सितंबर, 2014 के दौरान दो माह से अधिक रही वकीलों की हड़ताल के कारण राज्य की जेलें कैदियों से ठसाठस भर गई थी। कहीं क्षमता से पांच तो, कहीं छः गुणा अधिक कैदी जेलों में हो गए थे। पाली में 25 की क्षमता पर 178 कैदी, राजसमंद में 40 के स्थान पर 201, डूंगरपुर में 34 के स्थान पर 155, बाड़मेर में 48 की जगह पर 136 तथा भीलवाड़ा जेल में 172 की क्षमता पर 422 कैदी जेल में हो गए थे। ऐसी विकट स्थिति में जेल प्रबंधन के सामने भयावह परिदृश्य उत्पन्न हो जाता है।

भारतीय जेलों में बंद कैदियों में लगभग 95 प्रतिशत पुरुष तथा 5 प्रतिशत महिलाएं होती हैं। जहां तक आयु-वर्ग का प्रश्न है, कुल कैदियों में 35 प्रतिशत 18-30 वर्ष तथा 48 प्रतिशत 30-50 वर्ष के बीच के होते हैं अर्थात् 83 प्रतिशत कैदी सक्रिय एवं योगदान देने वाले आयु वर्ग (18-50 वर्ष) के हैं। ऐसे में कहा जा सकता है कि देश के अमूल्य मानव संसाधन (विशेषतः विचाराधीन कैदी) के हुनर एवं श्रमशक्ति का सदुपयोग नहीं हो पा रहा है, क्योंकि आज देश में दर्ज कुल आपराधिक मुकदमों में मात्र 41 प्रतिशत प्रकरणों में ही दंड सुनाया जाता है। निष्कर्षतः कह सकते हैं कि लगभग 60 प्रतिशत आरोपी अनावश्यक रूप से जेलों में बंद हैं। वैसे भी सर्वोच्च न्यायालय तथा राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग कई बार यह कह चुके हैं कि विचाराधीन कैदियों का आधा हिस्सा उनके कथित अपराध में संभावित सजा से अधिक अवधि तो निर्णय से पूर्व ही जेल में बिता चुके होते हैं। अतः ऐसे विचाराधीन कैदी समय-समय पर समीक्षा पर रिहा किए जाने चाहिए। सन् 2012 के आंकड़ों के अनुसार 1226 विचाराधीन महिला कैदी ऐसी भी हैं जिनके साथ 1397 बच्चे निरपराध होते हुए भी कैद काट रहे हैं।

यदि हम भारतीय जेलों में बंद कैदियों का शैक्षिक स्तर पर विश्लेषण करें तो एक विचारणीय तथ्य उभरता है। वह यह है कि कुल सजा प्राप्त कैदियों में 38 प्रतिशत निरक्षर (76626) अथवा अधिकतम सैकंडरी तथा शिक्षा प्राप्त हैं अर्थात् समाज के निर्धन, दीन-हीन, ग्रामीण तथा साधनविहीन परिवारों में अपराधों की संख्या अधिक है। ऐसे में यदि इन परिवारों का क्रियाशील आयु वर्ग का व्यक्ति (मानव संसाधन) जेल में होगा तो परिवार का जीवन-यापन कैसे होगा? सन् 2012 के आंकड़ों के अनुसार देश की सभी जेलों में इस वर्ष कुल 1471

कैदियों की मृत्यु हुई जिनमें 1345 प्राकृतिक मृत्यु तथा 126 अप्राकृतिक (हत्या या आत्महत्या) मृत्यु प्रकरण थे। भारतीय जेलों में फंदा लगाकर आत्महत्या करने के प्रकरणों की संख्या सर्वाधिक है। कैदियों के लिए नियमित चिकित्सा परीक्षण एवं आपातकालीन चिकित्सा स्वास्थ्य सुविधाएं नगण्य हैं। तभी तो सन् 1995 में रसूखदार एवं 'बिस्किट किंग' के नाम से चर्चित उद्यमी राजन पिल्लई की तिहाड़ जेल में इलाज के अभाव में मृत्यु हो गई थी। जेलों में स्थायी चिकित्सकों का भारी अभाव है तथा चिकित्सकों को 'कॉल' करके बुलाया जाता है और दशकों से इन डॉक्टर्स का मानदेय नहीं बढ़ा है।

देश की 1394 जेलों में कुल 50358 कार्मिक कार्यरत हैं। इस प्रकार 8 कैदियों पर एक जेलकर्मी तैनात है। झारखंड में 20 कैदियों पर तो बिहार में 17, उत्तर प्रदेश में 11 तथा राजस्थान एवं गुजरात में 10 कैदियों पर एक जेलकर्मी उपलब्ध है। संभवतः यही कारण है कि सन् 2012 में 8 स्थानों पर जेलें तोड़ी गईं और 160 कैदी घायल हुए। इस वर्ष 489 कैदी जेलों से भाग गए, इनमें 123 कैदी जेल तोड़ गए तथा शेष पैरोल से वापस ही नहीं लौटे। सन् 1986 में देश की सबसे बड़ी एवं सुविधा संपन्न तिहाड़ जेल से कुख्यात अंतरराष्ट्रीय अपराधी चार्ल्स शोभराज का जेलकर्मियों को नशीली मिठाई खिलाकर भाग जाना वैश्विक मीडिया की सुर्खी बना था।

नीति एवं प्रशासन

भारत के संविधान की सातवीं अनुसूची की दूसरी सूची 'कारागार प्रशासन' को राज्य सूची का विषय (चौथी प्रविष्टि) घोषित करती है और यही वह कारण है जो जेलों की दुर्दशा को बढ़ावा देता है क्योंकि भारतीय संघीय व्यवस्था में वित्तीय संसाधनों के अथाह स्रोत केंद्र सरकार को दिए गए हैं जबकि पुलिस, जेल, अस्पताल, कृषि, सिंचाई, स्वास्थ्य, स्थानीय स्वशासन, पशुधन, संचार तथा समाज कल्याण जैसी लोक कल्याणकारी एवं भारी लोक व्यय वाले दायित्व राज्य सरकारों के कंधों पर हैं। ऐतिहासिक, सामाजिक एवं राजनीतिक भिन्नताओं के साथ-साथ राज्यों की प्रशासनिक कार्य संस्कृति की विविधता के कारण देश में कुछ राज्य अधिक नवाचारी एवं प्रगतिशील हैं तो कुछ राज्य राष्ट्रीय परिदृश्य से कहीं पीछे रहते हैं। प्रथम वर्ग में महाराष्ट्र, कर्नाटक, केरल तथा तमिलनाडु सम्मिलित होते रहे हैं तो द्वितीय वर्ग में उत्तर प्रदेश, बिहार एवं हरियाणा सम्मिलित रहते हैं।

भारत में ब्रिटिश काल में बनाए गए जेल अधिनियम, 1894 के द्वारा कारागार प्रशासन संचालित होता है। साथ ही राज्य सरकारों ने अपने-अपने हिसाब से जेल मैनुअल भी निर्मित कर रखी है जो कि न समयानुकूल हैं और न ही उनमें कोई एकरूपता है। भारत में कारागार व्यवस्था में सुधार ब्रिटिश शासन के दौरान शुरू हो चुके थे। सन् 1836 में गठित हुई 'कारागार जांच समिति' के पश्चात् कैदियों से सड़क निर्माण में मजदूरी लेने का कार्य बंद हुआ। सन् 1838 में लार्ड मैकाले के सुझाव पर एक और 'कारागार सुधार समिति' गठित हुई जिसकी सिफारिशों में एक हजार कैदियों वाले केंद्रीय कारागारों की स्थापना, कारागार नियंत्रण हेतु राज्यों में कारागार निरीक्षक की नियुक्ति तथा महिला कैदियों हेतु पृथक व्यवस्था करना सम्मिलित था। सन् 1862 में 'ब्रिटिश कारागार जांच समिति' गठित हुई, जिसने कारागारों में गंदगी तथा अस्वास्थ्यकर दशाओं पर गंभीर चिंता प्रकट करते हुए तत्काल उपाय करने के सुझाव दिए। समिति ने 15 प्रतिशत कैदियों हेतु एकांत सुविधा तथा कारागार में चिकित्सक की नियुक्ति के भी सुझाव दिए। इसी क्रम में सन् 1866 से कारागारों में चिकित्सक नियुक्त होने लगे।

सन् 1894 में बने कारागार अधिनियम के पश्चात् देश में कारागारों में व्यवस्था स्थापित होने लगी तथा एकरूपता का निर्माण हुआ। इसी अधिनियम के माध्यम से कारागारों में कोड़े लगाने की प्रथा समाप्त हुई तथा दंड का स्वरूप परिवर्तित हुआ। बोर्स्टल तथा सुधार विद्यालय अधिनियम, 1898 के द्वारा बालक एवं किशोर अपराधियों हेतु पृथक केंद्र स्थापित होने लगे। अलेक्जेंडर

कार्डयू की अध्यक्षता में बनी कारागार सुधार समिति (1919–20) ने कारागारों में कठोरता के स्थान पर मानवीय दृष्टिकोण से युक्त सुधारों पर बल दिया। सन् 1919 के भारत सरकार अधिनियम के द्वारा कारागार को प्रांतीय विषय बनाया गया। सन् 1946 में बनी कारागार सुधार समिति ने कैदियों का वर्गीकरण करते हुए उन्हें बाल अपराधी, वयस्क अपराधी, महिला अपराधी, अभ्यस्त अपराधी, आकस्मिक अपराधी तथा मनोरोगी अपराधी के रूप में बांटा। इस समिति ने बाल अपराधियों के प्रति अधिक उदारता एवं सतर्कता बरतने पर बल दिया। सन् 1949 में कारागार सुधारों पर बनी पकवासा समिति ने कैदियों हेतु मनोचिकित्सक पद्धति अपनाने, अच्छे व्यवहार हेतु Good Time Allowance देने तथा सुधार गृह एवं आदर्श जेल स्थापित करने के सुझाव दिए जो कि सरकार द्वारा स्वीकार कर क्रियान्वित हुए।

कारागार सुधारों पर बनी न्यायमूर्ति ए.एन. मुल्ला समिति (1980–83) का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा है। समिति ने दिल्ली की तिहाड़ जेल तथा आगरा के संप्रेक्षण गृहों में बाल अपराधियों को गंभीर अपराधियों के साथ रखने एवं उनके साथ हो रहे दुव्यर्वहार पर गंभीर चिंता प्रकट की। समिति ने कारागारों में भौतिक सुविधाएं बढ़ाने, कैदियों के उत्तरवर्ती (Aftercare) पुनर्वास को कारागार व्यवस्था का अभिन्न अंग मानने, मीडियाके माध्यम से स्वैच्छिक संस्थाओं द्वारा कारागारों का निरीक्षण करने, विचाराधीन तथा दोषसिद्ध कैदियों को पृथक्–पृथक् रखने तथा सरकार द्वारा कारागार प्रशासन को पर्याप्त वित्तीय सहायता देने की कुल 658 सिफारिशें कीं। मुल्ला समिति की मुख्य सिफारिश यह थी कि कारागार प्रशासन को संविधान की समवर्ती सूची में लाया जाए तथा कारागार व्यवस्था पर एक राष्ट्रीय नीति बने। इस समिति की सिफारिशों के पश्चात् किशोर न्याय अधिनियम, 1986 पारित किया गया।

वर्ष 1987–88 में महिला कैदियों की स्थिति सुधार हेतु न्यायमूर्ति कृष्णा अय्यर समिति बनी जिसने अधिक महिला पुलिसकर्मियों की नियुक्ति करने तथा विशेष बाल अपराध प्रकोष्ठ बनाने के सुझाव दिए। 16 नवंबर, 1995 को राष्ट्रीय स्तर पर पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो (BPRD) के अधीन कारागार एवं सुधारात्मक प्रशासन संभाग की स्थापना की गई जो कि कारागार कार्मिकों के प्रशिक्षण, अनुसंधान एवं संदर्भ मंच का कार्य करता है। सन् 2005 में डा. किरण बेदी की अध्यक्षता में 'कारागार सुधारों एवं सुधार प्रशासन' पर राष्ट्रीय नीति बनाने हेतु एक समिति' गठित की गई जिसने सन् 2008 में अपनी रिपोर्ट में राष्ट्रीय नीति का प्रारूप भारत सरकार को प्रस्तुत किया।

किरण बेदी समिति ने कारागार सुधारों पर अपनी सारगर्भित एवं बहुआयामी रिपोर्ट प्रस्तुत की जिसमें प्रमुख सिफारिशों में कारागार विषय को संविधान की समवर्ती सूची में स्थान देने के साथ–साथ जेल प्रशासन एवं अपराधी सुधार को नीति–निर्देशक तत्वों में स्थान देने, मॉडल प्रिजन मैनुअल की पालना करने, समुदाय की भूमिका बढ़ाने, सन् 1894 के कारागार अधिनियम के स्थान पर नया सामाजिक कानून लाने एवं आपराधिक दंड संहिता में संशोधन इत्यादि सम्मिलित थी। बेदी समिति की कुल 97 सिफारिशों में प्रमुख सिफारिशें संक्षेप में इस प्रकार हैं–

1. सजा प्राप्त तथा विचाराधीन कैदियों हेतु पृथक्-पृथक् कारागार होने चाहिए।

2. ब्रिटिशकालीन कारागार अधिनियम, 1894 को समाप्त कर आधुनिक परिवेश के अनुसार एक नया कानून बनाया जाए।

3. जेल प्रशासन एवं अपराधी सुधार को संविधान के भाग–4 (राज्य के नीति–निर्देशक तत्व) में स्थान दिया जाए तथा कारागार एवं सुधारात्मक प्रशासन को संविधान की समवर्ती सूची में सम्मिलित किया जाए।

4. केंद्रीय गृह मंत्रालय द्वारा निर्मित 'मॉडल प्रिजन मैनुअल' को राज्य सरकारें अपनाएं।

5. कैदियों को विधिक सहायता एवं परामर्श देने की सुविधा होनी चाहिए।

6. कारागार एवं कैदी कल्याण हेतु जनसहभागिता को बढ़ावा दिया जाए।

7. जेल से रिहाई के पश्चात् पश्चातवर्ती सेवाएं देने हेतु संस्थान स्थापित किए जाएं।

8. भारतीय जीवन बीमा निगम की पालिसियों हेतु बने नियमों में संशोधन किया जाए ताकि सजा काट चुके व्यक्ति एवं उनके परिवार सदस्य भी लाभ उठा सकें।

9. कैदियों को उनकी रुचि तथा कौशल के आधार पर औद्योगिक प्रशिक्षण प्रदान किया जाए।

10. प्रत्येक राज्य में 'स्टेट लेवल आफ्टर केयर कमेटी' होनी चाहिए।

11. कैदियों को 'मताधिकार' दिया जाए।

12. किशोर एवं जवान अपराधियों को 'बोर्स्टल स्कूल' में ही रखा जाए।

13. मानसिक रोगियों को जेल में नहीं रखा जाए।

14. रिमांड कैदियों को बार-बार पेशी पर लाने के बजाए वीडियो कांफ्रेंसिंग का सहारा लिया जाए।

15. कैदियों से दंड के रूप में सामुदायिक सेवा करवानी चाहिए।

16. सुप्रसिद्ध व्यक्तियों द्वारा जेलों का निष्पक्ष एवं स्वतंत्र निरीक्षण किया जाना चाहिए।

17. कैदियों की शिकायत के निवारण का सुस्थापित तंत्र होना चाहिए।

18. कैदियों को योग, विपासना तथा 'आर्ट ऑफ लिविंग' जैसे तनाव मुक्ति शिविर में अवसर दिया जाना चाहिए।

19. प्रतिवर्ष 'बंदी दिवस' आयोजित किया जाए जिसमें कैदियों हेतु खेल-कूद एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम संपन्न किए जाएं।

20. 'जेल सर्विसेज' को पेशेवर स्वरूप दिया जाए तथा श्रेष्ठ जेलकर्मियों को मैडल प्रदान किए जाएं।

21. क्षेत्रीय कारागार प्रशिक्षण केंद्र स्थापित किए जाएं।

22. राष्ट्रीय सुधारात्मक प्रशासन अकादमी की स्थापना की जाए।

23. राज्यों में कारागार प्रशासन हेतु पृथक से स्वतंत्र निदेशालय होना चाहिए।

24. भारतीय दंड संहिता, 1860 तथा आपराधिक प्रक्रिया संहिता, 1973 इत्यादि कानूनों में व्यापक संशोधन किए जाएं ताकि कारागार प्रशासन में सुधार हो तथा कैदी कल्याण सुनिश्चित हो।

25. जेलों की आधारभूत संरचना तथा कैदी सुविधाओं में आमूल एवं व्यापक सुधार किए जाएं जैसे कि 10 कैदियों हेतु एक टायलट शीट एवं बाथरूम हो, इत्यादि।

समाधान

चूंकि भारतीय जेलों में दो-तिहाई कैदी विचाराधीन कैदियों की श्रेणी में हैं तथा इससे न केवल मानवाधिकारों का हनन होता है बल्कि जेलों की आधारभूत संरचना सुविधाएं भी चरमरा जाती हैं। सर्वोच्च न्यायालय तथा राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग कई बार सरकार को निर्देश दे चुके हैं कि उन विचाराधीन कैदियों को जेलों से रिहा किया जाए जो अपनी संभावित अधिकतम सजा जितनी अवधि जेलों में बिता चुके हैं। सन् 2006 में दंड प्रक्रिया संहिता में धारा '436ए' के माध्यम से विचाराधीन कैदियों की जेल की समय सीमा तय कर दी गई है। इसके बावजूद भी जिला स्तरीय समीक्षा समितियां गठित नहीं हुई हैं। सर्वोच्च न्यायालय ने न्यायिक अधिकारियों से कहा है कि वे सप्ताह में एक बार अधीनस्थ जेलों का निरीक्षण करें तथा विचाराधीन कैदियों को चिह्नित करें।

दरअसल, भारतीय विधि एवं न्याय व्यवस्था की संपूर्ण कार्यप्रणाली ही निष्प्रभावी है। सर्वोच्च न्यायालय 'बेल, नोट जेल' कहता है तो अधीनस्थ तंत्र 'जेल, नोट बेल' को ब्रह्मवाक्य मानता है। नौकरशाही का अहं इतना अधिक है कि वह स्वयं को आमजन से पृथक् एवं उच्च

मानती है। चाहे चिकित्सालय हों या विद्यालय या फिर कारागार जहां भी लाभार्थी सेवाएं लेने आता है या जनता को प्रशासन से कार्य होता है, लोक सेवकों के तेवर बदल जाते हैं। जेल सुधार हेतु यह आवश्यक है कि जेल सर्विस को पेशेवर शैली में ढाला जाए तथा प्रथम सुधार के रूप में विचाराधीन कैदी रिहा किए जाएं और सजा प्राप्त तथा विचाराधीन कैदियों की जेलें पृथक् हों। वस्तुतः जेल अपने आप में एक 'समुदाय' है। महात्मा गांधी का कहना है कि "अपराध, बीमार मस्तिष्क का परिणाम है अतः कारागार में वह वांछनीय वातावरण होना चाहिए जो इन बीमार मस्तिष्कों का उपचार कर सके।" स्थिति ठीक इसके विपरीत है। देश की जेलों में बंद कुल कैदियों में से 1.5 प्रतिशत कैदी मानसिक रोगी हैं। क्या ऐसे रोगियों को विशेषज्ञ अस्पतालों में होना चाहिए या सुविधाहीन काल कोठरियों में? प्रश्न मानवाधिकारों का है। कैदी को हेय दृष्टि से देखना अपने आप में अपराध है। सरकार, समाज तथा न्यायपालिका सभी को यह समझना होगा कि कैदी का भी आत्म–सम्मान है एवं उसके मानवाधिकार भी हैं। लोकतांत्रिक सरकार तथा कल्याणकारी राज्य का प्राथमिक दायित्व प्रत्येक आंख से आंसू पोंछना ही है।

संदर्भ

1. प्रिजन स्टेटिस्टिक्स इंडिया 2012, राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, 2013

2. भारत में पुलिस संगठनों के आंकड़े, (1 जनवरी, 2013 की स्थिति), पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, 2013

3. सुरेंद्र कटारिया, भारतीय लोक प्रशासन, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 2014

नेशनल पालिसी आन प्रिजन रिफोर्म्स एंड करैक्शनल एडमिनिस्टेशन, पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 2007

5. माडल प्रिजन मैनुअल फार द सुपरिंटेंडेंस एंड मैनेजमेंट आफ प्रिजन इन इंडिया, पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, 2003

पुलिस से भय आखिर क्यों?

राकेश चक्र
संपर्क : 90-बी, शिवपुरी (डबल फाटक),
मुरादाबाद–244001

प्रश्न यह है कि आज भारत राष्ट्र स्वतंत्रता की श्वास में जी रहा है और इसकी आंतरिक सुरक्षा के लिए अपने ही भाई-बहन पुलिस में भर्ती होकर हमारे बीच हैं, लेकिन जब वे वर्दी पहनकर पुलिस के चेहरे में आ जाते हैं, तब हम उनसे डरने लगते हैं। यदि यह कहा जाए कि भारत का आम आदमी पुलिस के नाम से भय का अनुभव करता है और उसके प्रति नफरत भी रखता है, क्या इस सच्चाई को नकारा जा सकता है? ऐसा आखिर क्यों? 60 वर्ष की आजादी के बाद भी पुलिस का चेहरा क्यों नहीं बदल पाया? अंग्रेजों के शासन में तो पुलिस का क्रूर चेहरा इसलिए था कि उन्हें यहां ज्यादा समय तक दबाकर-कुचलकर शासन करना था, लेकिन आज तो अपना ही शासन है और अपनी ही पुलिस है। फिर भी पुलिस को हम अपना नहीं समझ सके हैं, उससे भय और घृणा करते हैं और उसी तरह प्रायः पुलिस भी आम आदमी को भुनगा समझकर व्यवहार करती है और घृणा की दृष्टि से देखती है।

अर्थात् तात्पर्य यह हुआ कि घृणा के बदले घृणा मिल रही है। पुलिस उन्हीं कथित संभ्रांत व्यक्तियों का सम्मान करती है जो प्रभावशाली हैं, क्योंकि उसे अंदर से भय बना रहता है कि वे उसको नुकसान पहुंचा सकते हैं अतः उनके प्रति औपचारिक सम्मान और प्रेम दर्शाना पुलिस की मजबूरी बन गया है। इसलिए उनका सही–गलत कार्य तत्परता से होता है। प्रभावशाली लोगों में कोई भी हो सकता है–राजनीतिक-गैर-राजनीतिक। प्रभावशाली वही है जिसके पास अर्थ तो भरपूर है ही, साथ ही वह सत्ता-शासन के करीब है। सत्ता और शासन वह स्वयं हो सकता है या उसकी पहुंच में है। ये प्रभावशाली लोग पूरे देश में मुश्किल से दस प्रतिशत ही होंगे, शेष सब जन-सामान्य हैं। 90 प्रतिशत लोगों में से कभी किसी को पुलिस वालों की सहायता की आवश्यकता पड़ जाए, तो उन्हें कटु अनुभव होता है और यही कटु अनुभव उन्हें पुलिस के प्रति घृणा पैदा करवाता है। 'क्योंकि वादी गया तो मदद को था, लेकिन उसे प्रथम सूचना आख्या (एफआईआर) लिखाने के लिए ही दस अशोभनीय बातें सुननी पड़ीं। पूरा दिन पुलिसवालों की जी-हजूरी में गुजर गया' क्योंकि वह अकेला ही मदद मांगने गया था। यदि वह किसी प्रभावशाली व्यक्ति को साथ ले जाता तो उसकी तुरंत सुनी जाती। एफआईआर लिखने की सहमति उसी स्थिति में मिल पाती है जब प्रायः छोटा-बड़ा सुविधाशुल्क देने के लिए पीड़ित को पटा लिया जाता है। यहां भी अपवाद हो सकते हैं, लेकिन आम राय और सर्वेक्षण यही कहते हैं। बहुत से उन कारणों पर विचार करना आवश्यक होगा जिनसे आम जनता में पुलिस का नाम सुनते ही भय और घृणा के भाव भर जाते हैं। ऐसा आखिर क्यों? इस पर स्वस्थ मन से विचार अवश्य करना होगा।

1. पुलिस पर अपराधी बनाने का आरोप
2. मन में सेवा का अभाव
3. प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज न करने का आरोप
4. राष्ट्र सेवा का अभाव
5. वर्दी पहनकर अपने को शासक समझने की भूल करना
6. पक्षपातपूर्ण कार्यशैली का आरोप
7. भ्रष्टाचार का आरोप
8. भ्रष्टाचार के कुछ नमूने
9. अपराधियों से मिलीभगत का आरोप

पुलिस पर अपराधी बनाने का आरोप :- पुलिस पर सबसे प्रमुख आरोप यही लगता है कि पुलिस ही अपराधी को अपराधी बनाती है। जिस पुलिस को

आंतरिक सुरक्षा के लिए रखा गया था, उस पर ऐसा घिनौना आरोप लगे यह बहुत शर्मनाक बात है। तब कैसे अमन-चैन की आशा की जा सकती है। उदाहरण स्वरूप गांव के दो व्यक्ति नलकूप चोरी में पकड़े गए। उन्होंने पहली बार चोरी की थी। पुलिस ने दोनों के बयान ले लिए अर्थात् तीसरी डिग्री का प्रयोग किया। उनसे पूछा जा रहा है कि बताओ और कौन-कौन लोग चोरी करते हैं। वे पिटने के बाद भी कह रहे हैं कि हम और किसी को नहीं जानते, लेकिन पुलिस उन पर विश्वास नहीं कर रही है। पहली बार चोरी की और पहली बार पिटाई हुई। शरीर में पीड़ा हो रही है। पिटाई से जान नहीं छूट रही है। दो दिन ऐसे ही थाने में हो गए हैं। प्राण बच नहीं रहे हैं। उनमें से एक चोर और अधिक प्रताड़ना से बचने के लिए उस व्यक्ति के लड़के का नाम ले देता है जिससे खेत की मेंड के पीछे विवाद हुआ था। नाम बताते ही पुलिस उसे भी पकड़ लाई। उस पर थर्ड डिग्री का प्रयोग किया जा रहा है। वह बार-बार कह रहा है कि साहब मैंने चोरी नहीं की। वह निर्दोष है, वह बिना वजह पिट रहा है। तीनों की पुलिस लिखा-पढ़ी कर न्यायालय भेजती है। दो वर्ष के बाद उच्च न्यायालय से उनकी जमानतें हो जाती हैं। निर्दोष युवा के मन में उन दोनों अपराधियों और पुलिस के प्रति बहुत आक्रोश है। वह बदला लेने के लिए देशी रिवाल्वर खरीदता है। मौका पाकर उन दोनों की हत्या कर देता है और घर से भाग जाता है। अन्य अपराधियों को दोस्त बनाता है। बीहड़ों में रहने लगता है। एक के बाद एक अपराधों को अंजाम देने लगता है और ईनामी अपराधी बन जाता है।

क्षेत्रीय पुलिस पर बड़े अधिकारियों का दबाव पड़ा और साथ ही लिखित में आदेश भी आया कि अपराधियों के विरुद्ध निरोधात्मक कार्रवाई की जाए। उसमें टास्क भी है कि अमुक थाने को कितना-कितना टारगेट पूरा करना है। क्षेत्र में कानून व्यवस्था भी ठीक है, फिर भी थानाध्यक्ष पर दबाव है कि उसे टारगेट पूरा करके देना है। तभी उसकी जान बच पाएगी, नहीं तो थानाध्यक्ष पद से हटा दिया जाएगा, दूसरा थानेदार तैनात कर दिया जाएगा। इसी भय से वह पूर्व अपराधियों के विरुद्ध निरोधात्मक कार्रवाई करता है, जैसे-जो दो तीन वर्ष पहले कच्ची शराब बेचने का कार्य किया करते थे या कुसंग से निर्दोष होते हुए भी अपराधियों की श्रेणी में हो गए थे। कच्ची शराब बेचने वाले ने शराब बेचना भी छोड़ दिया है, वह शांति से रह रहा है अपने परिवार के साथ। पुलिस उसे गिरफ्तार करने जाती है और इसी तरह के दर्जनों लोगों को पकड़कर किसी पर देशी तमंचा, किसी पर शराब बरामदगी, किसी पर चोरी करने के प्रयास में आला नकब आदि दिखाकर बंद कर देती है। जिस थानाध्यक्ष ने इस पुण्य कार्य को सबसे ज्यादा करके दिखाया, वह अपने अधिकारियों से उतनी ही अधिक शाबाशी पाता है और अपनी थानाध्यक्षी बरकरार रखता है। जब किसी निर्दोष को इस तरह फंसाकर जेल भेजा जाता है तो वह पूरी तरह अपराधी बन ही जाता है। वह मनोवैज्ञानिक रूप से सोचता है कि उसे बिना अपराध किए ही अपराधी बना दिया जा रहा है तो क्यों न अपराध करके धन कमाया जाए। जेल में उसे किस्म-किस्म के अपराधी मिलते हैं। बस, प्रारंभ हो जाता है उसका नया जीवन।

रेलवे स्टेशनों, बस स्टैंडों या गांवों 'कस्बों में कुछ ऐसे भी लोग होते हैं जो अनाथ हो गए हैं या कोई शारीरिक या मानसिक विकृति के शिकार हैं, जिसके कारण वह हल्का-फुल्का नशा करने के आदी हो गए हैं। समाज और सरकार की जिम्मेदारी थी कि वे उन्हें सुधारें। कुछ भीख मांगकर पेट भरते हैं, कुछ भीख मांगकर नशा-पत्ता करते हैं। ऐसे ही खानाबदोशों को पुलिस ने पकड़कर उन पर गांजा, चरस, अफीम बरामदगी में दिखा दिया, क्योंकि क्षेत्रीय पुलिस को गुडवर्क करने थे। यह सब गुडवर्क में आता है जिसे निरोधात्मक कार्रवाई (Preventive Action) कहते हैं।

एक युवा पहलवानी करता था। घर सामान्य था।

थोड़ी-सी गांव में खेती थी। वह ग्राम प्रधान की जी-हजूरी नहीं करता था। अपने काम से काम रखता था। प्रधान दबंग था। पूर्व में अपराधी था और अपराधियों से संबंध थे। प्रधान ने एक दिन नमस्ते न करने पर बिना वजह उस युवा से कहा कि तेरे बहुत पर लग गए हैं, सब पहलवानी करना भुला दूंगा। युवा स्वाभिमानी था। उसने कहा कि मैं तो तुमसे कुछ नहीं कह रहा हूं। हां और लोगों की तरह जी-हजूरी नहीं करता हूं, प्रधान धमकी के लहजे में बोला कि साले सब औकात सिखा दूंगा। उस युवा ने कहा कि जवान संभाल कर बोलो। गांव के अन्य लोग आ गए। उन्होंने प्रधान से कुछ न कहकर उस युवा को डांट-फटकार कर भगा दिया। गांव में कुछ दिन बाद एक घर में चोरी हो गई। प्रधान पीड़ित के साथ थाने आया। पीड़ित पक्ष को सिखा दिया कि अमुक युवा का नाम लेकर एफआईआर दर्ज कराए। प्रधान की थानाध्यक्ष से सेटिंग थी, क्योंकि गांव में जब भी पुलिस आती थी, तो वही खाने-पीने, ठहरने की व्यवस्था करता था। प्रधान इधर-उधर से उगाही भी करा देता था। इसलिए पुलिस उसकी मुट्ठी में थी। उस निर्दोष के विरुद्ध चोरी का मुकद्दमा पंजीकृत हो गया। पुलिस गांव में आई और उस निर्दोष को गिरफ्तार कर लिया। कोई जांच-पड़ताल नहीं। उसके घरवाले और वह इतने दु:खी हुए कि पूछिए मत। थाने में लाकर उसे पीटा गया। बेचारा पिटता रहा। जेल चला गया।

इसी तरह के अनेकानेक उदाहरण दिए जा सकते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि जिसकी पुलिस से सेटिंग है वह किसी निर्दोष व्यक्ति को भी जाल में फंसा सकता है। दबंग और पुलिस मिलकर समाज के उन सीधे-साधे लोगों को भी अपराधी बना सकते हैं, जो सामान्य जीवन जीकर अपने परिवार का पालन पोषण कर रहे हैं। या तो उन्हें अपराधी बना दिया जाता है या उनसे धन उगाही कर ली जाती है। कई बार एनकाउंटर भी फर्जी और निर्दोष लोगों के करा दिए जाते हैं। हल्ला-गुल्ला ज्यादा हो गया, यानी कि एनकाउंटर करने वालों के विरुद्ध, एनकाउंटर किए गए व्यक्ति के घर वाले अड़े रहे और शक्ति प्रदर्शन किया तो जांच बैठती है। यानी सी.आई.डी. या सी.बी.आई. जांच होती है, वरना तो नक्कारखाने में तूती की आवाज बनकर खामोश पड़ जाती है। यदा-कदा ही एनकाउंटर करने वाले पुलिसकर्मी जेल की हवा खाते हैं। आए दिन ऐसी खबरें अखबारों और टीवी में सुर्खियों में बनी रहती हैं।

एक तथ्यपरक आलेख श्री बालगोपाल 'काम्बैट लॉ' के अंक अगस्त-सितंबर 2007 में 'पुलिस राज का आतंक' नाम से प्रकाशित हुआ है जो संपूर्ण भारत की पुलिस का आईना दिखाने पर बल दे रहा है। यहां उसका अक्षरश: उल्लेख करना समीचीन होगा।

पुलिस राज का आतंक

यह बेहद दुखदायी है कि हमारे मुल्क में कानूनी अतिवाद के चलते होने वाली मौतों, गुमशुदगियों और हिरासत में दी जाने वाली यातनाओं से जुड़ी घटनाओं में हर साल इजाफा होता जा रहा है। अकेले आंध्र प्रदेश में ही पुलिस उत्पीड़न, हिरासत में मौत और फर्जी मुठभेड़ों के वाकिये इतने बढ़ गए हैं कि वहां का आम आदमी खासा आतंकित हो चला है। राज्य के सीमावर्ती इलाकों में जाकर कोई भी देख सकता है कि किस प्रकार कथित नक्सलवादी होने के आरोपों के बीच वहां के लोग यातनाओं और गिरफ्तारियों के खौफ में जी रहे हैं। पुलिस उत्पीड़न की कथाएं लोगों की जुबान पर स्थायी जगह बना चुकी हैं। नक्सलियों के बारे में पुलिस को सूचनाएं देने के लिए ग्रामीणों को यह कहकर निरंतर डराया और सताया जाता है कि यदि वे अपनी खैर चाहते हैं तो पुलिस को नक्सलियों और उनकी कारगुजारियों की जानकारी दें। पुलिस की छवि यह हो चली है कि लोग झूठी-सच्ची कुछ भी सूचनाएं देंगे, तभी उसकी खौफनाक यातनाओं से बच सकेंगे।

जम्मू-कश्मीर और पंजाब दो ऐसे राज्य हैं जहां लापता लोगों की संख्या हजारों में है। वहां पुलिस द्वारा ढाये जाने वाले जुल्म और ज्यादतियों की संख्या

सामान्य-सी हो चली है। आंध्र प्रदेश में आमतौर पर यातना का जो तरीका अपनाया जाता है वह है शरीर के संवेदनशील हिस्सों को बिजली के करंट से दागना। शारीरिक पिटाई की बजाय विद्युत करंट का यह तरीका पीड़ित को आजीवन विकलांग बना देता है। इस कारण लोग इस तरीके से बेहद खौफ खाते हैं।

इस प्रकार देखा जाए तो पुलिस, सेना और अर्द्धसैनिक बलों को खुली छूट हासिल है। बेशक अपराध कोई भी व्यक्ति कर सकता है, परंतु बच निकलना हर किसी के लिए आसान नहीं होता। यह सुविधा कुछ चुनिंदा लोगों को ही हासिल है। बच निकलने की यह आजादी ही किसी अपराध को गैर अपराध के बराबर ला खड़ा करती है। देश के सुरक्षा बलों के साथ-साथ विशेष कृपापात्र गिरोह, जैसे छत्तीसगढ़ में सलवा जुडुम इत्यादि इसी कतार में हैं। वे कानून की परिधि से बाहर हैं यानी जुर्म तो कर सकते हैं पर सजाएं नहीं पा सकते। यह सिलसिला साल-दर-साल और दशक-दर-दशक बदस्तूर जारी है, पर न जाने क्यों न तो हमारे राजनेता और और न ही न्यायपालिका इसे रोकने की दिशा में कार्रवाई करते दिखाई देते हैं।

अनुच्छेद 226 के मातहत देश का सर्वोच्च न्यायालय तथा राज्यों के उच्च न्यायालय ब्रिटिश रिट याचिका कानून के मुकाबले जनता को अधिक व्यापक न्यायाधिकार मुहैया कराते हैं। भारत जैसे न्यायप्रिय मुल्क में न्यायाधिकार का यह व्यापक स्वरूप जरूरी भी है, लेकिन हमारे न्यायालय धरातल पर इस व्यवस्था का अक्षरशः पालन करते नजर नहीं आते? वे चाहें तो अलहदा स्थापनाओं के लिए अनुच्छेद 226, जो कि उन्हें व्यापक क्षेत्राधिकार देता है, की व्याख्या को आधार बना सकते हैं, लेकिन उन्हें यह रास्ता रास नहीं आता। इसकी बजाए आश्चर्यजनक ढंग से वे पुलिसिया-जुल्म से पीड़ित पक्ष को संबंधित मामले में अलग से निजी शिकायत दर्ज करने का निर्देश देते हैं। फौजदारी अदालतों में इस तरह की शिकायतों की सुनवाई का कोई अलग तरीका नहीं है।

मजिस्ट्रेट द्वारा संज्ञान लेने के तरीके भी अलग-अलग हैं। इनमें से एक है व्यक्ति द्वारा दर्ज शिकायत पर संज्ञान लेना। जबकि मजिस्ट्रेट द्वारा मात्र फोन काल प्राप्त करना ही संज्ञान के लिए पर्याप्त है। मुकदमे की सुनवाई प्रारंभ करने के मद्देनजर दोनों तरीकों में अंतर करने का कोई कारण नहीं है। मुकदमा महज जांच चाहता है। जाहिर-सी बात है कि साधारण नागरिक को किसी और घर की तलाशी लेने, वहां किसी वस्तु को जब्त करने और किसी व्यक्ति को हिरासत में लेकर पूछताछ करने का कोई अधिकार नहीं है। किसी फोरेंसिक विशेषज्ञ के किसी मामले में रिपोर्ट पेश करने के कहने का अधिकार नागरिक को नहीं है ऐसे में कोई नागरिक निजी तौर पर अभियोग कैसे चला सकता है? ऐसा नहीं है कि अदालतें इस बारे में अनभिज्ञ हैं। वे सब कुछ जानती हैं और कर सकती हैं, पर वे इस मामले में आगे न जाने का निश्चय कर चुकी हैं। उनके लिए बंदी प्रत्यक्षीकरण किसी गैरकानूनी हिरासत को कानूनी जामा पहनाने का अस्त्र होता है और वे इसके पार नहीं जाना चाहतीं।

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग जैसी अन्य संस्थाओं के समक्ष भी यही हिचक है। जहां तक उत्पीड़न का मामला है, भारतीय दंड संहिता यानी आईपीसी स्वयं इसे दंडनीय करार देती है। इसके लिए किसी ऐसे नए कानून की आवश्यकता नहीं है जिसके अंतर्गत किसी खास सूचना को उगलवाने के लिए दी जाने वाली यातना को अपराध की श्रेणी में लाया जा सके। आईपीसी के तहत यह पहले से ही संगीन जुर्म की श्रेणी में है। यदि यातना के दौरान गंभीर चोट आती है तो दोषी को 10 साल तक की सजा का प्रावधान है।

आज से करीब 30 साल पहले विधि आयोग ने सिफारिश की थी कि यदि कोई व्यक्ति पुलिस हिरासत में मौत का शिकार होता है तो कानूनी रूप से पुलिस को जिम्मेदार माना जाएगा, लेकिन इस सिफारिश को हम

आज भी अपने कानूनी संशोधनों में शामिल नहीं कर सके हैं। वैसे भी मानवाधिकारों को शक्ति प्रदान करने वाले संशोधनों को कानून में शामिल करने की इजाजत यदा-कदा ही मिल पाती है।

आपराधिक दंड संहिता में 2006 के प्रस्तावित संशोधनों के अंतर्गत डी. बसु के दिशा-निर्देश शामिल किए गए जिनमें पुलिस के लिए कार्रवाई की सीमाएं तय की गई हैं, लेकिन इन दिशा-निर्देशों के उल्लंघन की सूरत में संबंधित पुलिस अधिकारियों के खिलाफ सजा अथवा अभियोग का प्रावधान इनमें शामिल नहीं है। इस प्रकार देखा जाए तो यह आपराधिक दंड संहिता में दर्ज प्रक्रिया या अन्य नियमों जैसा ही है।

दरअसल, हमारे पास अभी तक इस दिशा में अपनाने अथवा लागू करने के लिए कोई निश्चित पद्धति नहीं है। गिरफ्तारी की कोई प्रारंभिक अवस्था नहीं होती। डी. बसु के दिशा-निर्देशों में से अरेस्ट मेमो वाले निर्देश को जरूर अपनाया जाता है। इस निर्देश के तहत मेमो उस दिन जारी करना आवश्यक है जिस दिन अभियुक्त को कोर्ट में पेश किया जाना है। बेशक पीड़ित व्यक्ति 10-15 दिन से पुलिस हिरासत में रहता आया हो, परंतु उसकी गिरफ्तारी प्रायः उसी रोज दिखाई जाती है जिस रोज उसे अदालत में पेश किया जाना हो। मामले की कानूनी औपचारिकताएं पूरी करने की दिशा में पूरी चालाकी बरतते हुए पीड़ित के परिजनों से गिरफ्तारी की तिथि दर्शाने वाले मेमो पर दस्तखत लिए जाते हैं। परिजन सबकुछ जानते हुए भी दस्तखत करने को विवश होते हैं, क्योंकि उन्हें इस बात का भय रहता है कि यदि उन्होंने पुलिस की बात नहीं मानी, तो पीड़ित व्यक्ति अवैध ढंग से हिरासत में ही नर्क भोगता रहेगा और अदालत का दरवाजा कभी नहीं देख सकेगा।

दुर्भाग्य से डी. बसु के दिशा-निर्देश अवैध गिरफ्तारी को वैध ठहराने का उपकरण बनकर रह गए हैं। यदि कल को कोई व्यक्ति इस अवैध गिरफ्तारी के खिलाफ अदालत का दरवाजा खटखटाता है तो अदालत यही कहेगी कि पीड़ित की पत्नी या अन्य परिजन ने दस्तखत कर यह प्रमाणित किया है कि गिरफ्तारी फलां तारीख को हुई है, न कि उससे दस दिन पहले। ऐसी सूरत में सवाल यही है कि असल अपराधी कौन है और अभियोग किस पर चलना चाहिए? हम सभी इस तथ्य से भलीभांति परिचित हैं कि इस मुल्क में किसी पुलिस अधिकारी पर मुकदमा चलाना और इसे जारी रखना लगभग नामुमकिन है, क्योंकि वह कानून की परिधि से बाहर समझी जाने वाली उस जमात का हिस्सा है जिसे निर्द्वंद्व अत्याचार की इजाजत मिली है और सरकार चुपचाप खड़ी तमाशा देखने को अभिशप्त है।

हमारे कानून के तहत राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की इजाजत हासिल है। मानवाधिकार हनन से जुड़े मामलों की शिकायत मिलने की सूरत में आयोग इस मशीनरी का इस्तेमाल कर सकता है। यह व्यवस्था राज्य मानवाधिकार आयोगों और राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग दोनों के लिए है, लेकिन राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की जांच मशीनरी काफी भारी-भरकम है जिसमें अवकाश प्राप्त पुलिस महानिदेशक व अन्य भूतपूर्व आला पुलिस अफसरों की नियुक्ति की जाती है। ये अधिकारी संबंधित मामले की निष्ठावान जांच के आदेश तो दे सकते हैं, परंतु खुद जांच कार्य नहीं कर सकते। ऐसे में इस बात की आवश्यकता है कि इंस्पेक्टर और सब-इंस्पेक्टर रैंक के पुलिस अधिकारियों को यह जिम्मेदारी दी जानी चाहिए जो पूरी सक्रियता के साथ जांच कार्य में असल भूमिका निभा सकते हैं। मानवाधिकार हनन के तमाम गंभीर मामलों की ठोस जांच यदि करनी है तो इसके लिए बड़ी संख्या में इंस्पेक्टर और सब-इंस्पेक्टर रैंक के पुलिस अधिकारियों को भर्ती करना होगा। यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि ये भर्तियां अलग से हों, न कि केंद्र अथवा राज्य पुलिस बलों से अधिकारियों का स्थानांतरण करके।

आज राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग सेमिनार और इसी प्रकार के अन्य मंचीय बहस-मुबाहिसों को

आयोजित करने वाली संस्था बनकर रह गया है। बेशक इसके पास जांच कार्य और उस आधार पर सिफारिशें करने का अधिकार है, लेकिन इसका इस्तेमाल नहीं किया जा रहा है और ये दूर के ढोल जैसे साबित हुए हैं। आयोग को चाहिए कि वह मानवाधिकार हनन के तमाम मामलों को समीक्षा के लिए अपने अधीन ले और संजीदगी से इनकी पड़ताल करे। आयोग खुद को सिर्फ पुलिस या अर्द्धसैनिक बलों द्वारा अंजाम दिए जाने वाले मानवाधिकार हनन के मामलों तक सीमित न रखे। पर अभी तक तो वह इस दिशा में आगे बढ़ता नजर नहीं आता, क्योंकि यातनाओं का सिलसिला बेखौफ जारी है।

हिरासत में मौत के मामले दहेज हत्या के अपराध जैसे ही हैं। मानवाधिकार हनन से जुड़े ये मामले किसी नरसंहार या हत्या के अपराधों की श्रेणी से अलग नहीं माने जा सकते, लेकिन अदालतें इन मामलों में पहल से कतराती रही हैं, क्योंकि उन्हे और राजनेताओं को नहीं लगता कि ये अपराध की श्रेणी में आते हैं। यही वजह है कि मानवाधिकार कार्यकर्ताओं के तमाम प्रयासों और शहादतों के बावजूद पंजाब और कश्मीर में ऐसे तमाम मामले अनसुलझे पड़े हैं तथा लोगों के लापता होने की घटनाएं निरंतर जारी हैं। प्रशासन के पास इसका रटा-रटाया जवाब है कि ये लोग भारत में आतंकवादी गतिविधियों के संचालन के लिए हथियार लाने के इरादे से नियंत्रण रेखा को पार कर गायब हो जाते हैं, लेकिन पुलिस से कोई यह नहीं पूछता और न उसके पास इसका कोई उत्तर है कि जो व्यक्ति उसकी हिरासत में था वह चंगुल से बचकर भला कैसे नियंत्रण रेखा को पार कर सकता है?

आम तौर पर पुलिस की यह दलील होती है कि वह जो भी कदम उठाती है, जनता को भरोसे में लेकर उठाती है। प्रचारित किया जाता है कि चंबल घाटी में लोगों के बीच पुलिस की छवि नायकों जैसी है। लेकिन यदि 1968 में है? और जनता के भरोसे और सहमति की आड़ लेकर इस सारे उत्पीड़न और फर्जी मुठभेड़ों को वैध ठहराने की कोशिश की जाती रही है। जाहिर है कोई भी स्पष्टवादी व्यक्ति सशक्त पुलिस बल की मौजूदगी से क्यों इंकार करेगा। उसे ऐसा इसलिए भी जरूरी लगता है कि आमतौर पर समाज में असुरक्षा की भावना व्याप्त है। चाहे कारण जो भी हो, खासकर मध्यवर्गीय लोगों में यह भावना घर किए हुए है कि हमारी फौजदारी न्याय प्रणाली शिथिल है। वे मानते हैं कि मानवाधिकारों की बात करने से अपराधों और अव्यवस्था में इजाफा होता है, सुरक्षा पर खतरा बढ़ने लगता है और नतीजतन पुलिस को सख्ती बरतनी पड़ती है। लोगों का यह भी विश्वास है कि कालेज जाने वाली छात्राओं के साथ मनचलों व अन्य गुंडा तत्वों द्वारा की जाने वाली छेड़छाड़ व अन्य हरकतों को रोकने के लिए सख्त पुलिस तंत्र का होना जरूरी है, क्योंकि इन दोनों तत्वों से पुलिस ही निबट सकती है। लोग तो यह भी चाह सकते हैं कि पूरे देश में ऐसी पुलिस हो जो अपराधियों को पकड़कर उन्हें नंगा कर सड़कों पर घुमा सके। जब तक हमारे समाज का एक भी तबका इस मनोवृत्ति से ग्रसित है और हम उसे कोई संतोषजनक उत्तर देने की स्थिति में नहीं हैं, तब तक मानवाधिकार कार्यकर्त्ता होने के नाते हमारे आपसी संवाद निरर्थक ही जान पड़ेंगे।

मन में मानव सेवा का अभाव का आरोपः- प्रत्येक मनुष्य में सेवा का भाव होना आवश्यक है तभी वह दूसरों की सहायता कर सकता है। पुलिस का ढांचा अंग्रेजों द्वारा खड़ा किया गया था और वे लाठी-डंडा चलाने में प्रवीण थे, वही शिक्षा हम भारतीयों को भी मिली। सच्ची सेवा का भाव ही हमें दूसरों की पीड़ा को अपनी पीड़ा जैसा समझने का ज्ञान देता है। कहावत भी है कि जिसकी फटी न कभी बिवाई, वो क्या जाने पीर पराई। सेवा शब्द बहुत व्यापक है जिसमें सबकुछ समाया हुआ है। पुलिसवालों की भर्ती के बाद कुछ माह/वर्ष का प्रशिक्षण दिया जाता है। जब प्रशिक्षण समाप्त होता है तब वे शपथ लेते हैं कि हम निष्ठा, सेवा, पक्षपात रहित होकर कार्य करेंगे, लेकिन व्यावहारिक जीवन में आते

ही उनकी कार्यशैली में परिवर्तन हो जाता है। उसका एक प्रमुख कारण यह भी हो सकता है कि उनमें जनता की सच्ची सेवा का भाव इसलिए भी नहीं रह पाता हो कि वे सिफारिश या भारी-भरकम सुविधाशुल्क देकर भर्ती हो रहे हैं। तब उनमें जनता के प्रति सच्ची सेवा का भाव बनाए रखना असंभव ही होगा। खैर कारण बहुत सारे और भी हो सकते हैं, लेकिन जब तक पुलिस में मन से सेवा भाव का नहीं होगा, तब तक वह आम लोगों के निकट नहीं आ सकती। यदि उसे अपनी छवि सुधारनी है, तो उसे सेवा का भाव लाना ही होगा।

प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज न करने का आरोपः- पुलिस पर यह आरोप बहुत लगता है कि उसमें शिष्टाचार नाम की चीज नहीं होती है। इस आरोप में कुछ-न-कुछ सच्चाई भी है। पता नहीं वर्दी में कौन-सा नशा मिल जाता है कि शिष्टाचार की बातें दरकिनार कर दी जाती हैं। जैसे कोई साधारण पीड़ित व्यक्ति पुलिस से थाना/चौकी में मदद मांगने आया या कहें कि अपराध करने वालों के विरुद्ध मुकद्दमा पंजीकृत कराने आया है, तो शिष्टाचार तो यह कहता है कि उसे वहां सांत्वना देते हुए कायदे से बैठाया जाए। फिर उसकी बात सुनकर तुरंत ही प्रथम सूचना रिपोर्ट लिखी जाए। प्रथम सूचना रिपोर्ट मौखिक या लिखित दोनों तरह लिखने का प्रावधान है, लेकिन होता उल्टा है। पुलिस शिष्टाचार से पेश आने की बजाए उसके साथ अशिष्टता से व्यवहार करने लगती है। जैसे किसी महिला के गले की चैन छीन कर लुटेरा भाग गया। थाने में पीड़िता और उसका पति आदि आए हैं तब पुलिसवाले अपने डायलाग सुनाएंगे- 'कौन कहता है कि जेवर पहनो' 'पहले तो दिखाकर चलती हैं और जब छिन जाता है तब थाने भागती हैं', 'लोगों ने सतयुग समझ लिया है क्यों बाहर निकलती हैं पहनकर', 'अभी जांच की जाएगी दारोगाजी एक घंटे बाद आएंगे', तब एफआईआर लिखी जाएगी। ये तो रहे सामान्य डायलाग, कुछ असामान्य डायलाग भी वादी को सुनने पड़ते हैं। वह तिलमिलाकर रह जाता है। अब वे दोनों पति-पत्नी खीजकर यही कहते हुए वापस लौट लेंगे कि छोड़ो कौन लिखाए एफआईआर।

अब इसी तरह दो-तीन व्यक्ति खून में लथ-पथ थाने आते हैं और बताते हैं कि उन्हें अमुक-अमुक ने अमुक बात पर अमुक स्थान पर मारा-पीटा है। घायलों में एक दांत टूट गए हैं। वे पीड़ितों को सांत्वना देने और सम्मान से बैठाने की बजाए दस गालियां सुनाएंगे 'साले हरामखोर' चले आते हैं लड़-झगड़कर थाने, जैसे हमें और काम ही नहीं, बैठो उधर चबूतरे पर एस.एच.ओ. साहब अभी क्षेत्र में गए हैं'....उन पीड़ितों को त्वरित न्याय मिलना चाहिए था कि उनका डॉक्टरी इलाज कराया जाता, उन्हें जल और चाय आदि पिलवाई जाती। संज्ञेय अपराध है तो संज्ञेय और असंज्ञेय है तो उसी तरह एफआईआर दर्ज की जाती। संज्ञेय है तो मुलजिमों की तुरंत गिरफ्तारी की जाती। यदि पीड़ितों ने सुविधाशुल्क जाते ही गुप-चुप दे दिया है तो एफआईआर दर्ज होने में देर नहीं लगती है। सुविधाशुल्क देने में गलत व्यक्ति देर नहीं लगाता है। वह निर्दोष को फंसा देता है। इसी प्रकार तमाम तरह की बातें देखने-सुनने में आती रहती हैं। रोज ही समाचार-पत्रों में पुलिस पर अशिष्टता की कथा बयान हुआ करती है।

भारत के भू.पू. मुख्य न्यायाधीश आरदणीय श्री ए.एम. अहमदी साहब की टिप्पणी इस ओर पूरी तस्वीर बयां कर रही है-

"पर हम इस पर दूसरे नजरिए से भी विचार करें। पुलिसबल भी दिनोंदिन निर्दयी होता जा रहा है। यह निर्दयता इतनी खतरनाक है कि किसी ने एक बार मुझसे कहा कि आज अगर आप पुलिस स्टेशन में शिकायत लिखाने जाएं तो आप अभियुक्त बनकर लौटेंगे। अतः सवाल यह है कि हमारे पुलिस अधिकारियों को कितने विवेकहीन अधिकार दिए जा सकते हैं? पिछले कुछ समय से हम पाते हैं कि विवेकहीन अधिकार बढ़ रहे हैं और चुप रहने के अधिकार को कम किया जा रहा है। वास्तव में साक्ष्य या गवाही अधिनियम की धारा 113 के

अंतर्गत खास तरह की धारणा का मामला उठाकर इसका प्रभाव कम कर सकते हैं। इस सबका अर्थ यह है कि एक समाज के रूप में हम विकट स्थिति में फंस गए हैं। अब बताएं कि सिविल सोसाइटी अथवा इस देश की जनता को इस तरह की यातनाओं से कैसे बचाएं।"

राष्ट्रसेवा का अभाव :- राष्ट्रसेवा की शपथ लेने के बाद पुलिस वालों में राष्ट्र सेवा का संकल्प होता, तो वे जान-बूझकर कभी त्रुटियां न करते। अपराधियों से सांठ-गांठ के जो मामले प्रकाश में आते रहते हैं वे कभी भी नहीं आते। आए दिन अखबार और टीवी चैनलों में इस तरह की सुर्खियां बनी रहती हैं। अमुक पुलिस के सिपाही/अधिकारी के अमुक जघन्य अपराधी से संबंध पाए गए। उनके विरुद्ध कार्रवाई होती है लेकिन इसमें भी पक्षपात होता है। यदि वह आरक्षी, मुख्य आरक्षी या उपनिरीक्षक है तो उसे बर्खास्त ही कर दिया जाता है, लेकिन वरिष्ठ अधिकारी के विरुद्ध कभी बर्खास्तगी जैसी कार्रवाई नहीं होती है। इस देश में राष्ट्रसेवा का अभाव इसलिए परिलक्षित हो रहा है कि जब पूरा समाज ही इससे विलग होता जा रहा है, तब पुलिसबल में ही राष्ट्रभक्ति पूरी तरह कैसे रह पाएगी। विश्व के कई देश ऐसे हैं जहां आज भी सच्ची राष्ट्रभक्ति है और वे शिखर पर हैं- जैसे जापान, अमेरिका, जर्मनी, फ्रांस आदि। राष्ट्रप्रेम, राष्ट्रभक्ति, राष्ट्रसेवा सब एक-दूसरे के पर्याय हैं। यहां के अधिकांश नागरिकों में स्वयंसेवा की भावना ही घर करती जा रही है। यहां तक कि सेना में कुछ मामले घोटाले और शत्रुओं को मदद पहुंचाने के अनेकानेक प्रकार के आते रहते हैं, जो कि देश के लिए शर्म की बात है। ऐसे मामले जापान, अमेरिका आदि देशों में कभी नहीं आते। संतों, महापुरुषों का यह देश राष्ट्रभक्ति की भावना न होने के कारण ही अपराध और अपराधियों का गढ़ बन गया है।

वर्दी पहनकर अपने को शासक समझने की भूल करना :- यह सत्य है कि कोई भी व्यक्ति जब वर्दी धारण कर लेता है तो अधिकांश में सहजता और सरलता का अभाव हो जाता है और वह समाज का अंग न मानकर अपने को विशेष श्रेणी का समझने लगता है। वर्दी उसे शासक बनने का नशा और अहंकार पैदा कर देती है और वह आम लोगों से असामान्य व्यवहार करने लगता है। अपवाद स्वरूप दबंगों को छोड़कर, अन्य जन सामान्य के साथ दुर्व्यवहार की घटनाएं आए दिन सुनने में आती रहती हैं। ऐसा करने से उन्हें ग्लानि का अहसास भी नहीं होता है और कहते सुना जाता है–दो टके का आदमी अपने को समझता क्या है? तेरी ये मजाल? हम अच्छों-अच्छों की हवा निकाल देते हैं। अशोभनीय गालियां जीभ पर चिपकी रहती हैं। छोटी-छोटी बातों में और आम बातें करते हुए भी उन्हें आसानी से सुना जा सकता है।

कभी-कभी कुछ वर्दीधारी अपराधियों की तरह कार्य करते हुए रंगे हाथ पकड़े जाते हैं। उनके ऐसे कृत्य से वर्दियां ही शर्मसार हो जाती हैं। जनता अब जागरूक हो रही है, साथ ही अपराधी किस्म के लोग हर जगह पनप रहे हैं। वे मौके की तलाश में रहते हैं कि कब पुलिस के दुर्व्यवहार का मामला उछले और कब उन्हें आग में घी डालने का अवसर मिले। जैसे पुलिस किसी गांव या एक जाति-संप्रदाय वाले मोहल्ले में दबिश डालने गई है और संयोग से मुल्जिम भी गिरफ्तार कर लिया और उसको थाने तक लाने के लिए चलने लगे तो अभियुक्त के घरवालों ने उसे छुड़ाने का प्रयास किया। पुलिस ने उसके घरवालों के साथ दुर्व्यवहार करना शुरू कर दिया, थोड़ी-बहुत खींचातानी भी हो गई। अन्य गांव वाले भी इस पर उत्तेजित हो गए। तब ऐसी परिस्थितियों में उसे शासक की भूमिका निभानी पड़ती है। यहां तो पुलिस की भूमिका को उचित ठहराया जा सकता है।

जन सामान्य के प्रति आमतौर से पुलिस को शासक न समझकर अपने को सेवक ही समझना चाहिए तब कभी भी पुलिस से आम लोगों को भय नहीं लगेगा और वे अपराधी को पकड़वाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएंगे। उनको अपने ही बीच का व्यक्ति समझेंगे।

पक्षपातपूर्ण कार्यशैली का आरोपः- पुलिस पर प्रायः यह आरोप लगता है कि वह सबके साथ समान व्यवहार नहीं करती। दबंगों या सत्ता से जुड़े लोगों के साथ उसका व्यवहार मधुर हो जाता है और अन्य लोगों के साथ व्यवहार में कठोरता आ जाती है। यह आरोप बेदम नहीं है, अर्थात् ऐसा होता रहता है जिसके कारण पुलिस का चेहरा बेदाग नहीं रह पाता है। इसी बदलाव के कारण उन लोगों के साथ अन्याय होने की पूरी संभावना होती है जो सामान्य लोग हैं और सत्ता से दूर हैं। पुलिस की छवि पर इसका विपरीत असर पड़ता है जिसके कारण समाज में पुलिस की छवि मित्र जैसी नहीं रह पाती। पुलिस आरोप-प्रत्यारोपों को झेलते हुए चिकना घड़ा बन जाती है। विशेषकर थाना स्तर के अधिकारी। थाने से ऊपरवालों से तो आम जनता का वास्ता न के बराबर ही पड़ता है। हर कोई त्वरित न्याय चाहता है। जब उसे वह नहीं मिलता, तब वह पुलिस पर पक्षपातपूर्ण व्यवहार होने का आरोप लगाता है। पक्षपातपूर्ण वाली बात वहां भी परिलक्षित हो रही है, जहां वादी पीड़ित तो पुलिस को सुविधाशुल्क नहीं देता, वह सोचता रहता है कि उसकी तो सुनी ही जाएगी, क्योंकि वह फरियादी है, लेकिन प्रतिवादी बिचौलियों/छुटभइयों, नेताओं से मिलकर और नाटक कर सुविधा शुल्क की व्यवस्था करवा देता है और तब उल्टे वादी के ही खिलाफ एफआईआर लिखा दी जाती है। नाटक भी ऐसा किया जाता है कि प्रतिवादी, वादी हो जाता है और वादी, प्रतिवादी। ऐसा होने से उस गांव, कस्बे या मोहल्ले में पुलिस की छवि खराब बन जाती है। इतना ही नहीं वादी के विरुद्ध एफआईआर के साथ-साथ उसे पुलिस के डायलागों से भी रू-ब-रू होना पड़ता है। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि वादी और प्रतिवादी दोनों की ओर से एफआईआर लिखा दी जाती है और यदि मारपीट जैसा विवाद हुआ है जिसमें वादी निर्दोष है फिर भी उसे प्रतिवादी के साथ-साथ हवालात की हवा खानी पड़ती है, बेइज्जत होना पड़ता है, यानी जिसने अपराध किया है वह भी अपराधी और जिसने नहीं किया है वह भी अपराधी। इस तरह दोनों पक्षों को दंगा-फसाद फैलाने का आरोपी सिद्ध कर दिया जाता है। इसलिए कई मामलों में पीड़ित पक्ष/चौकी तक जाना उचित नहीं समझता। वह अपमान, पीड़ा सहकर भी चुपचाप बैठने में अपनी भलाई समझता है।

आज की विषम परिस्थितियों में पक्षपातपूर्ण वाली बीमारी लाइलाज हो गई है। इसमें आमूलचूल परिवर्तन करना कोई आसान कार्य नहीं लगता है।

भ्रष्टाचार का आरोपः- पूरे विश्व में भ्रष्टाचार के मामले में कुछ देश अधिक ही चर्चित हैं। बांग्लादेश, पाकिस्तान, नाइजीरिया, केन्या और भारत आदि। लेकिन पीड़ा इस बात की होती है कि राम और कृष्ण, महात्मा गांधी वाला देश भी विश्व के भ्रष्टतम देशों में गिना जा रहा है जहां धन की माया सर्वोपरि हो गई है। अच्छे-बुरे कार्य सब धन से आसानी से निपट जाते हैं। अपराधी बिना सजा पाए सीना फुलाए घूमते हैं। चपरासी से लेकर ऊपर तक अधिकांश कर्मचारी/अधिकारी/सत्ताधीश दूध के धुले हुए नहीं रह पाते हैं, अर्थात् कहीं-न-कहीं गड्ढ़े में पानी भरता रहता है। इधर वर्ष 1975 के बाद तो स्थिति और अधिक बिगड़ी है और अब लाईलाज हो गई है। अधिकतर चेहरे उजले प्रतीत हो रहे हैं, लेकिन अंदर बहुत कुछ ऐसा घटित हो रहा है कि विश्वास ही नहीं होता कि ऐसा भी हो सकता है। यहां तक कि देश के माननीय सांसद भी रिश्वत लेते पकड़े जाते हैं, माननीय प्रधानमंत्रियों पर भ्रष्टाचार और घोटाले के आरोप लगते हैं। आम आदमी इस सबसे अनभिज्ञ है, वह तो बस, भीड़ का एक सदस्य है जिसे स्वयं मालूम नहीं है कि सच क्या है? वह बस, जाति और धर्म के नाम पर भेड़ों के रेवड़ की तरह पीछे-पीछे चला जा रहा है।

जब इस देश की अधिकांश संस्थाएं, कार्यालय और लोग भ्रष्टाचाररूपी विशाल वृक्ष की छाया में पल्लवित-पुष्पित हो रहे हैं, तब पुलिस ही उससे अछूती कैसे रह सकती है? यह एक कटु सत्य है। पुलिस पर

लोग भ्रष्टाचार का आरोप पल-पल पर लगा रहे हैं कि छोटे-से-छोटा जायज काम भी बिना लिए-दिए नहीं किया जाता। कुछ प्रांतों या स्थान विशेष में पुलिस अपवाद स्वरूप साफ-सुथरी हो सकती है, लेकिन आमतौर से वह भ्रष्टाचार के खूनी पंजे में लिप्त है ऐसा सर्वेक्षणों से ज्ञात हुआ है। कुछ उदाहरणों से बात स्पष्ट हो जाएगी जो चर्चा में रहे।

गरीबों के लिए नासूर व पुलिस के लिए कमाई का साधन बना सामूहिक हत्याकांड :- सहारा न्यूज ब्यूरो, झांसी, 15 अक्टूबर। विधानसभा 2007 के मतदान के कुछ ही दिन पहले मैरी में आपसी रंजिश में चली गोलियों ने जहां चार व्यक्तियों की जान ले ली। वहीं दोनों पक्षों के बीच खिंचातानी ने मैरीवासियों का जीना दूभर कर दिया। इधर पुलिस जब चाहे तब रात के अंधेरे में तो कभी दिन के उजाले में मैरी हत्याकांड का बहाना लेकर गरीब लोगों को उठा लाती है। यह उत्पीड़न व शोषण का खेल बड़ागांव गेट से लेकर ग्राम मैरी तक फैला है और प्रशासन इसे मूकदर्शक बना देख रहा है। दिग्गजों के बीच की यह लड़ाई गरीबों के लिए मौत बनती जा रही है।

कहते हैं कि अपराधी जानवर और मासूम जनता हरी-भरी फसल होती है, जब वर्दीरूपी रक्षक भक्षक बन जाए तो अपराधीरूपी जानवर जनतारूपी फसल को खाने लगता है। बाद में उसे भोर की किरण फूटने से पहले या रात के अंधेरे में छोड़ दिया जाता है।

उत्पीड़न का दंश झेल रहे बड़ागांव गेट बाहर एवं मैरीवासी अपनी व्यथा से कई बार जिला प्रशासन को अवगत करा चुके हैं। कलैक्ट्रेट में धरना प्रदर्शन करके भी गुहार लगाई गई, लेकिन न तो जिला प्रशासन द्वारा इस ओर कोई कारगर कदम उठाया गया और न ही पुलिस के आलाधिकारियों ने इस तरफ ध्यान दिया। परिणामस्वरूप बड़ागांव गेट बाहर तथा मैरी क्षेत्र उजाड़ बस्ती में तब्दील होने लगे और ये क्षेत्र पुलिस के लिए भले ही फायदेमंद हो रहे हैं, लेकिन आम लोगों के लिए अतिसंवेदनशील बने हुए हैं। इस दुस्साहसिक घटना ने समूचे क्षेत्र को हैरत में डाल ही दिया था, बल्कि पुलिस महकमे को भी मुश्किलों में डाल दिया था। माह 7 मार्च को मतदान के ठीक तीन दिन पहले एकसाथ 4 व्यक्तियों की हत्या तथा मतदान के बाद मैरी तथा बड़ागांव गेट बाहर क्षेत्र में हुए तांडव ने कितने ही गरीबों के घर उजाड़ दिए। दुखद पहलू तो यह रहा कि इसे पुलिस के आलाधिकारी चौहरे हत्याकांड की परिणति मानते रहे और जिन्हें संवेदनाएं मिल रही थीं, वह इसमें सबसे आगे निकल गए। कौन किसका आदमी है तथा हत्यारोपियों के आदमी बताने के नाम पर पुलिस और विपक्षियों ने जमकर उत्पात मचाया। उन्होंने मकान तोड़कर धराशायी कर दिए।

एसपी ने पुलिस चौकी सहित एसओजी के 12 सिपाही बदले :- निर्णय तो और कड़ा होना चाहिए था लेकिन पुलिस बल की कमी एवं कुछ मजबूरियों के चलते जनपद के कर्मठ एवं जुझारू पुलिस कप्तान ने कानून व्यवस्था की रखवाली तथा विभाग को हो रही बदनामी से बचाने के लिए कोतवाली नगर क्षेत्र की कालवनगंज पुलिस चौकी के 7 सिपाहियों सहित एसओजी टीम के 5 सिपाहियों को इधर-से-उधर करते हुए अपनी स्पष्ट कार्यशैली सहित कानून व्यवस्था को ज्यादा तरजीह दी है। पुलिस चौकी व एसजीओ के कर्मचारी नहीं सुधरे तो आजिज आए पुलिस कप्तान ने कोतवाली नगर क्षेत्र के कालवनगंज पुलिस चौकी के 7 पुलिसकर्मियों सहित एसओजी के 5 सिपाहियों को तत्काल प्रभाव से इधर-से-उधर करने का निर्णय ले, हटाए गए पुलिस कर्मियों को शीघ्र ही तैनाती स्थल में आमद दर्ज कराने के निर्देश दे डाले।

मिली जानकारी के अनुसार कोतवाली नगर क्षेत्र के खुटला, रहुनिया, कंचनपुरवा आदि इलाकों में चल रहे जुआखानों तथा खुलेआम चल रहे सट्टा व्यवसाय की मिल रही खबरों के क्रम में पहले तो कालवनगंज व एसओजी टीम के सिपाहियों को समझाया-बुझाया। फिर

चेतावनी दी और जब इसके बावजूद भी चिह्नित पुलिसकर्मी नहीं सुधरे तो पुलिस कप्तान आशुतोष कुमार ने देर शाम कालवनगंज पुलिस चौकी के का. को खाईपार, सिविल लाइन, मर्दननाका, अलीगंज, सिविल लाइन, बिलगांव, गिरवां भेजने के आदेश जारी किए।

इसी प्रकार स्पेशल टास्क फोर्स के नाम पर गठित टीम में शामिल कांस्टेबल को मादेबाबा, पखरीली, ओरन, काजीटोला, लमहेटा पुलिस चौकियों में तैनात किया गया है।

जानकारी यह भी मिली है कि इन पुलिसकर्मियों को इससे बड़ी सजा देना चाहते थे लेकिन जिले में पुलिस बल की कमी व राजनैतिक मजबूरियों के चलते उन्होंने केवल तबादले किए हैं। कालवनगंज पुलिस चौकी व एसओजी टीम की गतिविधियों से रसूख रखने वाले जानकारों का कहना है कि कालवनगंज पुलिस क्षेत्र में सरेआम नालबंद जुए की फड़ें व सट्टा व्यवसाय चलाता था, इसी प्रकार एसओजी टीम भी अपना काम करने के बजाए जिलेभर में घूम-घूमकर अवैध धंधेगीरों से मिलकर अवैध वसूली करने में व्यस्त रहते थे। आरोप यह भी है कि उक्त पुलिसकर्मियों की खामियों के चलते पूरा विभाग ही बदनाम हो रहा था।

कुछ उदाहरण और

1. एक साहब की मोटर साइकिल बैंक के सामने खड़ी थी। डिग्गी में ताला लगा था, उसमें रुपए और अन्य जरूरी पेपर्स रखे थे। एक चोर ने डिग्गी में रखे रुपए और कागजात मास्टर चाबी लगाकर पार कर दिए। वे बैंक से काम करके लौटे। डिग्गी खुली देखकर उनके होश फाख्ता हो गए। उसमें मोटर साइकिल का रजिस्ट्रेशन और बीमा आदि के मूल कागजात तथा एक हजार रुपए रखे थे। वे तुरंत थाने आए और चोरी होने की रिपोर्ट की। दिवसाधिकारी ने सारी घटना बड़े अहसान से सुनी। वादी को बैठने के लिए भी नहीं कहा और डायलॉग सुनाते हुए बोले, "तुम भी क्या आदमी हो? डिग्गी में पेपर और रुपए रखने की क्या आवश्यकता थी। चोरी तो होगी ही... क्या पुलिस प्रत्येक स्कूटर, गाड़ी और घर को रखाएगी...।" बेचारा फरियादी चुपचाप सुनता रहा। रिपोर्ट लिखने के लिए गिड़गिड़ाता रहा। सहमति जब बनी कि जब कुछ जुगाड़-पानी की बात हो गई। वह भी इतनी की चोरी की बजाए गुमशुदगी दर्ज करने की। उससे कहा गया कि प्रार्थना-पत्र लिखकर दे दो कि कागजात कहीं खो गए हैं। उसने वैसे ही किया तब उस प्रार्थना-पत्र पर थाने की मोहर लगी। इतने से कार्य के लिए कई घंटे खराब हुए। इस तरह अपराधी को पुलिस द्वारा जीवनदान दिए जाते रहते हैं।

2. एक साहब पेशे से शिक्षक थे। आयु भी 62 वर्ष के आस-पास हो गई थी। कर्मेंद्रियां शिथिल पड़ गई थीं। उन्होंने सोचा कि जो उनके नाम लाइसेंस पर बंदूक है, वह अपने पुत्र के नाम स्थानांतरित करा दें। उन्होंने इसके लिए सारी औपचारिकताएं पूरी कीं। जिलाधिकारी कार्यालय से सारे पेपर्स जांच हेतु थाने आए। जांच एक उपनिरीक्षक को मिली। पहले तो उन्होंने सोचा कि काम जायज है इसलिए जल्दी हो जाएगा। वे बेचारे पहले तो अकेले दौड़े, फिर वे एक व्यक्ति को लाए जो उस उपनिरीक्षक से परिचित था। उपनिरीक्षक ने उससे इशारा किया कि पांच पत्ते दिलवा दो। शिक्षक इसके लिए सहमत नहीं हुए। वे वापस आ गए। फिर उन्होंने अन्य सिफारिशें लगाईं। वे स्वयं भी थाने की रोज ही दौड़ लगाते रहे। इस तरह बीस दिन से ज्यादा गुजर गए। एक दिन तो उस उपनिरीक्षक ने हद ही कर दी कि उसने अपने कई पेपर्स की फोटो स्टेट कराने के लिए उन शिक्षक को आदेशित कर दिया। वे बचारे अपने पैसों से फोटोस्टेट कराकर लाए, लेकिन वह उप निरीक्षक हां-हां तो कहता, लेकिन उसने रिपोर्ट लगाकर आगे नहीं बढ़ाई। फिर उन्होंने ऐसी सिफारिश लगाई कि उसे रिपोर्ट लगानी पड़ी, लेकिन अभी उस पर थानाध्यक्ष की सहमति का मिलना बाकी था। वहां से डिप्टी एसपी के कार्यालय, बाद में पुलिस अधीक्षक के कार्यालय जाएगी। दर्जनों

सिफारिश होने के बाद उपनिरीक्षक ने रिपोर्ट लगाई। उस बुजुर्ग शिक्षक के मन में पुलिस के प्रति कैसी छवि रहेगी।

3. एक गांव में भूतपूर्व प्रधान के यहां डकैती पड़ी। काफी नकदी, लाइसेंसी बंदूक और सामान चला गया। डकैतों ने बेइज्जत भी किया और मारपीट भी की। घर के सदस्यों को चोटें भी आईं। पीड़ित पक्ष एफआईआर लिखाने थाने गया। थानाध्यक्ष ने मामला हल्के में लिया और पीड़ित पक्ष को ही डायलाग सुनाना शुरू कर दिया। "बनते हैं ठाकुर और रखते हैं बंदूक और डकैती डलवा लेते हैं... जब अपना घर नहीं रखाया जाता तो बंदूक को बेच देते...लाइसेंसी बनते हैं...पुलिस कहां-कहां रखाएगी...सो जाते हैं घोड़े बेचकर कि डकैत घर में आ गए और पता नहीं चला..." इस तरह के डायलाग सुनने के बाद पीड़ित पक्ष शांत बना रहा। फिर उन्होंने थानाध्यक्ष को बताया कि उनका लड़का भी सी.आई.डी. में इंस्पेक्टर है और एक भतीजा दीवान है तथा एक सिपाही है। इस पर थानाध्यक्ष बोला कि क्या हुआ, ऐसे पता नहीं कितने सी.आई.डी. में पड़े रहते हैं...वह डायलाग सुनाने के कई घंटे बाद घटनास्थल पर आया। उसने मौका-मुआयना कर बताया कि यह तो डकैती है ही नहीं, यह तो लूट है। जबकि वे बता रहे हैं कि बदमाशों की संख्या 10-12 थी। पीड़ित पक्ष ने गांव के एक-दो बदमाशों की ओर इशारा किया कि अमुक आदमी का हाथ हो सकता है। वह थानाध्यक्ष वहां भी पीड़ित पक्ष को सांत्वना देने की बजाय बेइज्जत करता रहा, जबकि उसे पता था कि इनके घर में दो-तीन लोग पुलिस में हैं, लेकिन वह इसलिए पीड़ित पक्ष को दबाव में ले रहा था कि वे कहीं ऊपर शिकायत न कर सकें। उसने डकैती की रिपोर्ट लिखने की बजाय लूट की लिखी। पीड़ित पक्ष द्वारा जिन बदमाशों की ओर इशारा किया गया था वे तफ्तीश के दौरान संलिप्त पाए गए। बंदूक भी बरामद हो गई और उसे थानाध्यक्ष ने अपने घर रख लिया। थानाध्यक्ष ने सारे बदमाशों (अपराधियों) से धन ऐंठ लिया। पीड़ित पक्ष का जो पुत्र पुलिस में था वह भी एसओ से मिला तो उसने अच्छा रेसपांस नहीं दिया और उपेक्षित कर दिया। वे जब जिले के वरिष्ठ अधिकारी से मिले और सारी स्थिति को बताया तब जाकर वह लूट वाली एफआईआर डकैती में परिवर्तित हुई और जो बरामद बंदूक थानाध्यक्ष ने अपने घर में रख रख रखी थी वह बदमाशों पर बरामदगी में दिखाई। यह है पुलिस का चरित्र जो अपने ही विभाग को भी बेइज्जत करने से नहीं बख्शती, आम लोगों की तो बात ही क्या है?

4. एक गांव की विवाहिता यौवन में ही विधवा हो गई। उसके पति की एक दुर्घटना में कुछ समय पूर्व मृत्यु हो गई थी। बेचारी पूरी तरह जवानी में टूट गई। उसकी ससुराल गरीब थी। उसके सास-ससुर उसे प्यार दे रहे थे। वह उनके साथ-साथ रह रही थी। गांव के कुछ दबंग लोग उस पर डोरे डालने लगे, लेकिन वह अपने को बचाए रही। आते-जाते छेड़खानी भी करने लगे। बेचारी घूंघट ढके हुए चुपचाप सुनकर चली जाती। एक दिन वह अपने खेत में काम कर रही थी कि उसी गांव के दो व्यक्ति जो एक राजनीतिक दल में छुटभइए नेता थे जो उससे यदा-कदा छेड़खानी भी करते रहते थे, आ गए। उन्होंने उसके साथ बारी-बारी से बलात्कार कर दिया और भाग गए। वह रोई-चिल्लाई, घर आकर सारी घटना अपने सास-ससुर को बताई। वे रपट लिखाने के लिए थाने आए। उनके पहुंचने से पहले ही वे अपराधी अपनी गाड़ियों से थाने पहुंच गए। पुलिस को राजनीतिक प्रभाव और रिश्वत से अपने पक्ष में कर लिया। उल्टे कह दिया कि गांव में अमुक की विधवा ने गांव का माहौल खराब कर रखा है। वह तो बदचलन औरत है। पीड़ित पक्ष की एफआईआर नहीं लिखी गई। चुनाव हुए दूसरी सरकार आई। तब उसकी रिपोर्ट कई माह बाद लिखी गई। तब तक उसके एक शिशु जन्म ले चुका था। वह अबला जिंदगी भर न जाने कितनी पीड़ाओं को और झेलेगी और जीते जी न जाने कितनी बार मरेगी।

ये उपर्युक्त उदाहरण तो नमूने भर हैं, जो कानों को

सुनने को मिलते रहते हैं और आंखों से देखने को। कई बार देखा गया है कि कहीं कोई बड़ी दुर्घटना वाहनों के बीच में हो जाती है। लोग दुर्घटना में काल के गाल में समा जाते हैं। मृतकों की तलाशी में कीमती सामान मिलने पर उसे रोजनामचा आम में नहीं दर्शाया जाता। कभी-कभी थाने के मालखाने में कीमती चीजें साक्ष्य के बतौर रखी रहती हैं वह गायब हो जाती हैं और उनकी जगह दूसरी नकली चीजें रख दी जाती हैं।

कभी-कभी पुलिस ही पुलिस को फंसाने का नेक काम करती है। जैसे पुलिस का एक कनिष्ठ कर्मचारी/अधिकारी किसी बड़े अधिकारी से किसी जायज समस्या पर अपनी बात रखता है या उनके किसी अन्याय के विरुद्ध मर्यादित रहकर आवाज उठाता है, तब उसको बड़े अधिकारी का कोपभाजन बनना पड़ता है। उसके विरुद्ध दूर-दराज में स्थानांतरण या निलंबन जैसी कार्रवाई तो करते ही हैं, साथ ही मौका आने पर उसके विरुद्ध किसी अन्य माध्यम से झूठे केस में फंसा देते हैं और चरित्र पंजिका रंग देते हैं जिससे पदोन्नति होने का तो प्रश्न ही नहीं उठता। क्या उपर्युक्त बातों का शिकार कोई कर्मचारी अपना मनोबल बनाए रख सकता है या रुचि से कार्य कर सकता है। यहां कौन अधिकारी किस बात पर नाराज हो जाए कुछ पता ही नहीं चलता, वही अंग्रेजों जैसी स्थिति आज भी चल रही है।

मऊरानीपुर झांसी में मूर्ति चोरी कांड हुआ जिसमें पुलिस उस कारण को उजागर तो नहीं कर पाई, लेकिन वह ऐसे कृत्य करती रही जिसे 'आज समाचार पत्र' 19 अक्टूबर 2007 ने इस शीर्षक से प्रकाशित किया।

मूर्ति चोरी कांड उजागर करने में पुलिस नाकाम

झांसी, 18 अक्टूबर। मऊरानीपुर में ऐसी घटना हुई जिससे जनता की आस्था पर ठेस पहुंची। वर्षों पुरानी अष्टधातु की मूर्तियां चोरी कर ली गईं और चोरों ने पुलिस को खुली चुनौती दी। दूसरी घटना को अंजाम देकर। अभी तक पुलिस इसमें कोई सुराग हासिल नहीं कर पाई है। लेकिन इस घटना से मऊरानीपुर पुलिस की दुकानदारी अच्छी शुरू हो गई है प्रतिदिन छोटे-बड़े चोरों को पकड़ कर कोतवाली तक लाना और अंधेरा होने तक उन्हें भेज देना, ऐसा कारोबार चलने लगा। जबकि पुलिस अभी तक इस कांड में कोई सुराग हासिल नहीं कर पाई।

गौरतलब है कि गत दो रोज पूर्व मऊरानीपुर कस्बे में एक घटना हुई थी जिसमें कुरैचानाका के समीप स्थित रामजानकी मंदिर में चोरों ने हाथ साफ कर दिए। बताया गया था कि मंदिर के पुजारी सायंकाल के समय पूजा करने के बाद मंदिर का ताला बंद कर गए थे, लेकिन जब सुबह मंदिर में पहुंचे तो ताला खुला था, लेकिन टूटा नहीं था। मंदिर के सभी गेट के ताले खुले हुए थे। टूटने के निशान नहीं थे। इससे साफ जाहिर होता है कि चोरों ने चाबियां मिलाकर ताले खोले होंगे। हालांकि यह जांच का विषय है। चोरों ने मंदिर में रखी वर्षों पुरानी अष्टधातु की मूर्तियां चोरी कर लीं और भाग गए। पुजारी के मंदिर में पहुंचते ही हाहाकार मच गया। काफी संख्या में भीड़ एकत्रित हुई। घटना की सूचना पुलिस को दी गई। इससे पुलिस भी मौके पर पहुंची। पुलिस ने घटनास्थल का जायजा लिया और अज्ञात चोरों के खिलाफ मुकद्दमा भी दर्ज किया। इसके पूर्व में भी एक मंदिर को चोरों ने निशाना बना लिया।

इसी संदर्भ में दैनिक जागरण में भी 'मजनुओं से छात्राएं परेशान' शीर्षक से समाचार प्रकाशित किया। जो अवलोकनीय है।

मजनुओं से छात्राएं परेशान

"पापा, अब मैं कालेज नहीं जाऊंगी, शायद भाग्य में पढ़ना नहीं लिखा।" ये शब्द फिल्म की स्टोरी के अंश नहीं, बल्कि ऐसी छात्रा की दर्दभरी आवाज है जो आवारा किस्म के मजनुओं के द्वारा आए दिन होने वाली छेड़खानी से आजिज आ चुकी है। हालांकि स्व. बहादुर सिंह महाविद्यालय में बीए प्रथम में पढ़ने वाली मैथिली

शरण नगर निवासी उस छात्रा के अभिभावकों ने उसे पूर्ण आश्वासन देकर पढ़ाई करते रहने को कहा, लेकिन लफंगे किस्म के आवारा लड़कों की आए दिन होने वाली छेड़खानी और जलालत झेलती रही उक्त छात्रा का निर्णय नहीं बदला।

यह दास्तान किसी एक छात्रा की नहीं, बल्कि कई ऐसी बालिकाएं हैं जो इन शोहदों की आए दिन की हरकतों से कालेज छोड़कर भाग्य के भरोसे घर बैठने को मजबूर हो गई हैं। चौराहों, चाय, पान की गुमटियों, नुक्कड़ों पर खड़े होकर बदतमीजी करने वाले आवारा लड़कों ने इतना दबदबा कायम कर रखा है कि इनकी ओछी हरकतों के बावजूद भी कोई छात्रा जलालत बर्दाश्त करते हुए भी सर नीचा कर निकल जाने में ही भलाई समझती है।

पुलिस के उदारवादी रवैया अपनाने के कारण परिजन भी स्वयं को असहाय पाते हैं और अपनी लाडली को घर बैठाने पर ही भलाई समझते हैं। बुंदेलखंड इंटर कालेज की कक्षा 12 की एक छात्रा ने बताया कि वह जब भी कालेज जाती है तो पहले से ही नुक्कड़ों पर गुमटियों पर झुंड में खड़े आवारा लड़के बदतमीजी करते हैं। डिग्री कालेज की बी.ए. द्वितीय वर्ष की छात्रा ने कहा कि वह आए दिन होनेवाली बदतमीजी से आजिज आ चुकी है। एक दो नहीं, बल्कि कालेज आने-जाने वाली लगभग हर छात्रा की ही यही समस्या है। मंदिर आने-जाने वाली महिलाओं, लड़कियों को भी इसी मुसीबत से दो चार होना पड़ता है और हालात है कि सुधरने का नाम नहीं ले रहे हैं। जिस देश में महिलाओं, लड़कियों को देवी का दर्जा दिया गया हो, वहीं उनके साथ इस प्रकार का दुर्व्यवहार भी किया जाता है।

मजनुओं पर कार्रवाई करने का दावा करते हैं, लेकिन उनके दावे ढाक के तीन पात ही अभी तक साबित हुए हैं। स्थानीय पुलिस की लचर कार्यपद्धति के बाद छात्राओं के अभिभावकों ने पुलिस के उच्चाधिकारियों को गोपनीय पत्र भेजकर कार्रवाई की मांग की तो जागरण को पुलिस के जिले के शीर्ष अधिकारी ने दूरभाष पर वार्ता करते हुए भरोसा दिलया कि छात्राओं को हिम्मत हारने की कतई जरूरत नहीं है।

अपराधियों से मिलीभगत का आरोपः- पुलिस पर प्रायः यह आरोप भी लगते रहते हैं कि उनकी अपराधियों से मिलीभगत है। सारे अपराध उनके संज्ञान में होते हैं, पुलिसवाले ही सुधर जाएं तो अपराध होंगे ही नहीं...आदि-आदि। इसमें सच्चाई हो सकती है, लेकिन पूरे पुलिस-तंत्र पर ऐसा आरोप मढ़ना उचित नहीं होगा। उनमें कुछ लोग तो आज भी ईमानदारी और निष्ठा से कार्य कर रहे हैं, हां यह सत्य है कि आज पूरे समाज में सुविधाभोगिता बढ़ने के कारण पुलिस पर भी इसका असर पड़ा है और ईमानदारी शब्द का प्रयोग अब बेमानी जैसा लगने लगा है। कहने का मतलब है कि आज के विषम हालात में पूर्ण ईमानदार रहना असंभव नहीं तो कठिन अवश्य है। कई राज्यों में ऐसे हालात देखने को मिल रहे हैं जिन पर जनता की अंगुली सहज ही उठ जाती है। आम जनता बहुत कुछ देखती-सुनती है। जैसे कच्ची शराब कई जगह खुलेआम बिकती है, जुए-सट्टे भी कई जगह दबे-छुबे चलते हैं, खनन भी कई जगह खुलेआम चलता है बस, जीपें व अन्य वाहनों में निर्धारित मानक से अधिक यात्री भूसे की तरह ठूंसे जाते हैं। यहां तक कि देश की राजधानी दिल्ली और नोएडा जैसी जगहों में कुछ स्थानों में वाहनों के ऊपर, पीछे, दाएं, बाएं, लटके-बैठे देखे जा सकते हैं, दोपहियों पर तीन-चार सवारियां खुलेआम चलती हैं, प्राइवेट वाहन वाले आम लोगों से आए दिन दुर्व्यवहार करते चलते हैं, लड़कियों से छेड़खानी, कहीं-कहीं वेश्यावृत्ति, अन्य नशीले पदार्थों की चुपके-छिपके बिक्री, नकली दूध उत्पादन व अन्य नकली उत्पादन आदि-आदि होते रहते हैं और मौन होकर आम जन देखते रहते हैं तथा कभी जब ज्यादा हल्ला-गुल्ला या आम चर्चा या अखबारों की सुर्खियों में वह मामला आता है, तब कुछ छापे भी पड़ते हैं, लेकिन कोई जागरूक नागरिक संबंधित को सूचना देने के लिए

कान पर जूं रेंगाए तो वह उसे यह कहकर लज्जित कर देते हैं कि तूने क्या कोई समाज सुधार का ठेका ले रखा है, जो हो रहा है उसे होने दे या यह कहकर टरका दिया जाता है कि जब समय मिलेगा तो देख लेंगे। इसी कारण कोई सज्जन व्यक्ति संबंधित के पास जाना उचित नहीं समझता। सबकुछ राम भरोसे चलता रहता है।

जिस तरह प्रत्येक मनुष्य के जीवन में संस्कार मिले होते हैं, वह उसी के अनुसार अपना जीवन जीता चला जाता है। उसी तरह पुलिस भी समाज का ही एक अंग है, उसमें भी अच्छे-बुरे सब तरह के लोग आते हैं। स्वार्थ और लालच ही मनुष्य की आंखों पर पट्टी बांध देता है। यदि जिसके पास ये दोनों उतने ही हैं जितनी जीवन को जीने के लिए आवश्यकता है, तब तो ठीक, वरना तो सही-गलत का फैसला करने में अंधेर होता रहता है। इसी कारण पूरे समाज का चेहरा बदल रहा है और साथ ही पुलिस का भी, क्योंकि वह भी समाज की ही एक इकाई है। फिर हम उनमें ही शिष्टता, सज्जनता, सहनशीलता, मानवता, दयालुता और हंसता हुआ चेहरा कैसे देख सकते हैं।

आज अनेक तरह के आरोप-प्रत्यारोप पुलिस पर लगाए जा रहे हैं जिससे उसका रूप अंग्रेजों की पुलिस जैसा हो गया है, बल्कि उससे भी अधिक घिनौना, क्योंकि अंग्रेजों की पुलिस पर केवल क्रूरता का ही आरोप ज्यादा था तथा भ्रष्टाचार का बहुत कम, लेकिन वर्तमान में पुलिस पर अमानवीयता, क्रूरता, भ्रष्टाचार और अनाचार आदि सभी तरह के आरोप लग रहे हैं, जब आरोप लगते हैं तो कुछ-न-कुछ सच्चाई अवश्य होती है। अब हम उन कारणों को सिलसिलेवार वर्णित करेंगे जिनके कारण पुलिस ऐसा करने के लिए मजबूर हो रही है, उसकी छवि सुधर नहीं रही है। जन-मानस भयभीत रहता है। आम आदमी मदद लेने से कतराता है। सर्वेक्षण के मुताबिक यदि प्रत्येक पीड़ित की एफआईआर लिखी जाए, तो आज दर्शाए जा रहे अपराधों के आंकड़ों से 5 गुना अपराधों की संख्या बढ़ जाएगी। विदेशों में तो छोटी-से-छोटी बात पर भी पुलिस और न्यायालय की लोग मदद लेते हैं और उन्हें त्वरित न्याय मिलता है। लेकिन यहां क्राइम का मिनिमाइजेशन होता रहता है और केवल कागजी फायर से दर्शाया जाता है कि क्राइम नियंत्रण में है। वह चाहे सिविल का हो या आपराधिक, दोनों में ही वादी को दर-दर भटककर उपेक्षा, अपमान और धन बरबाद करना पड़ता है। तब तक उसकी सारी आशाएं दम तोड़ चुकी होती हैं।

संज्ञेय अपराध में लिप्त रहे दारोगा को एसपी ने किया निलंबित

'आज' बांदा 18 अक्टूर। आपराधिक मामले में लिप्त रहे नगर कोतवाली में तैनात पुलिस उपनिरीक्षक को तत्काल प्रभाव से निलंबित कर दिया गया है। सीबीसीआईडी की विवेचना में इस दारोगा को संज्ञेय अपराध में लिप्त होने का दोषी ठहराया गया है। न्यायालय में चार्जशीट दाखिल होने के तीन माह बाद निलंबन की कार्रवाई की गई है। पुलिस अधीक्षक ने बताया कि मु.अ.स. 429/94 धारा 667, 468, 471, 343, 218 व 120 बी आईपीसी थाना सिविल लाइन इलाहाबाद की विवेचना सीबीसीआईडी द्वारा की गई। जांच एजेंसी ने विवेचना उपरांत चार्जशीट 10 जुलाई, 2007 को न्यायालय में प्रस्तुत किया था जिसके क्रम में स्थानीय नगर कोतवाली में कार्यरत पुलिस उपनिरीक्षक को अपराध में लिप्तता के आरोप में तत्काल प्रभाव से निलंबित कर दिया गया है।

वीडियो पाइरेसी के अभियोगों में कार्रवाई संबंधी दिशा-निर्देश

अरुण कुमार पाठक
द्वारा श्री चक्रपाणि मनियार, 113/4, शिवकुटी
(अपट्रान टीवी फैक्ट्री के पीछे), इलाहाबाद-211004

आजकल वीडियो सीडी की दुकानों की संख्या बहुत बढ़ गई है। महानगरों में आपको फुटपाथ पर फेरीवाले वीडियो सीडी बेचते हुए मिल जाएंगे। बड़ी-बड़ी कंपनियों की महंगी वीडियो सीडी की चोरी-छिपे डुप्लीकेट सीडी बनाई जाती है तथा उसको अत्यंत कम दामों पर बाजार में उपलब्ध करा दिया जाता है। महंगी तथा असली कंपनी की वीडियो सीडी को कापी करके सस्ते वीडियो सीडी बनाकर बाजार में उपलब्ध कराना वीडियो पाइरेसी कहलाता है। आजकल यह वीडियो पाइरेसी का कार्य असामाजिक व आपराधिक तत्वों द्वारा किया जा रहा है। इस कृत्य से जहां एक तरफ सरकार व वास्तविक अधिकार रखने वाली कंपनियों को राजस्व की भारी हानि होती है, वहीं दूसरी ओर ब्लू फिल्मों आदि की पाइरेसी व बिक्री से समाज में अन्य कई प्रकार के अपराध भी पनपते हैं।

इस प्रकार के प्रकरणों में धारा-51, धारा-52(ए), धारा 63 तथा धारा 63(ए) और 63(बी) कॉपीराइट एक्ट, 1957 के तहत अभियोग पंजीकृत किया जाता है। पुलिस अधिकारियों को कापीराइट एक्ट, 1957 की धारा-64 में इस प्रकार की पाइरेटेड वीडियो सीडी को अभिगृहीत करने की शक्ति दी गई है। इसके अतिरिक्त यदि मूल सीडी से कापी करके बनाने वाले उपकरण आदि पकड़े जाते हैं तो वह धारा-66 (घ) सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 के अंतर्गत अपराध की श्रेणी में आएगा।

कापीराइट एक्ट, 1957 की सुसंगत धाराओं का संक्षिप्त वर्णन निम्नवत है–

1. धारा-51- इस धारा में किसी कृति के प्रतिलिप्यधिकार (कापीराइट) या भाड़े के लिए प्रतियां बनाना, बेचना या उसे भाड़े पर देना या व्यापार के प्रयोजन के लिए वितरित करना अपराध है।

2. धारा 52(ए)- इस धारा में किसी कृति के ध्वनि अंकन तथा वीडियो फिल्मों की विशिष्टियों को उसके स्वामी से बिना अधिकार या अनुज्ञप्ति प्राप्त किए उसका नाम, पता और अनापत्ति प्रमाण-पत्र का उपयोग कर लेना होता है, जो अपराध है।

3. धारा 63- इस धारा में प्रतिलिप्यधिकार (कॉपीराइट) या इस अधिनियम द्वारा प्रदत्त अन्य अधिकारों का अतिलंघन अपराध है।

4. धारा 63(ए)- इस धारा में धारा-63 के अधीन किए गए अपराध की पुनरावृत्ति करने पर बढ़े हुए दंड का प्रावधान है।

5. धारा 63(बी)- इस धारा में कंप्यूटर प्रोग्राम की अति उल्लंघनकारी प्रति के जानबूझकर किए गए उपयोग को अपराध की श्रेणी में रखा गया है।

6. धारा 64- इस धारा में सब-इंस्पेक्टर और उससे ऊपर की पंक्ति के सभी पुलिस अधिकारियों को अति उल्लंघनकारी कृतियां अभिगृहीत करने की पुलिस की शक्ति का वर्णन किया गया है।

वीडियो पाइरेसी के मामलों में जब भी कोई मुकदमा पंजीकृत किया जाता है तो ठीक से साक्ष्यों को एकत्रित न किए जाने के कारण अभियुक्त न्यायालयों से दोषमुक्त हो जाते हैं। इस संबंध में पाईरेसी के मामलों में छापा मारते समय बरती जाने वाली सावधानियों के संबंध में एक एसओपी (स्टैंर्ड आपरेटिव प्रोसीजर, Standard Operative Procedure) आंध्र प्रदेश पुलिस विभाग द्वारा तैयार की गई है। इस एसओपी के मुख्य निर्देश निम्न हैं-

1. वीडियो पाइरेसी/कापीराइट मामलों में अभियुक्तों के छूटने के मुख्य कारण–

क. अधकचरी विवेचना,

ख. गवाहों का गवाही से मुकर जाना,

ग. फालतू गवाहों को साक्षी बनाना,

घ. अशिक्षित गवाहों को साक्षी बनाना,

ड. अभियुक्तों के विरुद्ध बिना पर्याप्त साक्ष्य एकत्रित किए उनके विरुद्ध आरोप-पत्र प्रेषित करना।

च. लोक अभियोजक से सलाह लेकर आरोप-पत्र दाखिल करना।

2. ऐसी घटनाओं की सूचना पर थाने पर की जाने वाली कार्रवाई-

क. थाने पर ऐसी सूचना लाने वाले या प्राप्त करने वाले पुलिस अधिकारी द्वारा थाने की जीडी (जनरल डायरी) में उसी के द्वारा अंकित किया जाना चाहिए।

ख. सूचना प्राप्त होने के बाद स्थानीय गवाहों को अवश्य ही थाने से घटनास्थल के लिए चलते समय साथ लिया जाना चाहिए। सरकारी वीडियोग्राफर व फोटोग्राफर को भी साथ में लिया जाना चाहिए।

ग. तलाशी व साक्ष्य संग्रहण के समय स्थानीय गवाहों की मौजूदगी अवश्य ही होनी चाहिए।

3. घटनास्थल पर की जाने वाली कार्रवाई-

क. धारा-165 दं.प्र.सं. के तहत की जाने वाली तलाशी प्रक्रिया का लेखांकन स्थानीय गवाहों की मौजूदगी में मौके पर ही किया जाना चाहिए।

ख. स्थानीय गवाहों की मौजूदगी में ही तलाशी की कार्रवाई होनी चाहिए।

ग. संपूर्ण तलाशी कारवाई की फोटोग्राफी/ विडियोग्राफी सरकारी वीडियोग्राफर द्वारा होनी चाहिए और वीडियोग्राफर का 161 दं.प्र.सं. के तहत कथन भी लेखबद्ध (विस्तार से) किया जाना चाहिए।

घ. वीडियोग्राफर द्वारा की गयी वीडियो रिकार्डिंग की डीवीडी/सीडी कार्रवाई पूर्ण होने के तुरंत बाद ही प्राप्त कर लेनी चाहिए और उसकी भी फर्द स्थानीय गवाहों के समक्ष ही कब्जे में वीडियोग्राफर से लेने की बना लेनी चाहिए।

ड. फर्द में घटनास्थल का पूरा विवरण अंकित किया जाना चाहिए।

च. धारा 165 दं.प्र.सं. के तहत की गई तलाशी प्रक्रिया की फर्द की एक प्रति अभियुक्त को भी दी जानी चाहिए।

छ. यदि अभियुक्त की वीडियो सीडी/डीवीडी की दुकान है या उसके परिसर में वीडियो सीडी/डीवीडी बरामद हुई हो तो उस स्थल की भी फोटोग्राफी करा लेनी चाहिए।

ज. दुकान के लिए यदि किसी प्रकार का कोई लाइसेंस जारी किया गया हो, जैसे-नगर निगम, नगर पंचायत, तथा वाणिज्य कर विभाग द्वारा, तो उसे जब्त कर लेना चाहिए।

झ. दुकान के मालिकाना हक की जांच के लिए उसके बिजली के बिल तथा नगर निगम के मकान नंबर की प्रति को भी जब्त कर लेना चाहिए।

श्र. दुकान मालिक से पूछताछ करके उसका भी 161 दं.प्र.सं. के तहत बयान दर्ज करना चाहिए।

ट. घटनास्थल के आसपास के कम-से-कम दो पड़ोसियों का बयान भी दर्ज करना चाहिए।

ठ. यदि अभियुक्त दुकान में किराएदार है, तो किराएदारी के एग्रीमेंट की कॉपी जब्त कर लेनी चाहिए।

ड. अभियुक्त और मकान मालिक के बीच हुई किराएदारी डीड (Rental Deed) की प्रति जो अभियुक्त के पक्ष में हो, को भी जब्त कर लेना चाहिए तथा मकान मालिक का 161 दं.प्र.सं. के तहत बयान दर्ज करना चाहिए।

ढ. वीडियो/ऑडियो शाप का स्टाक रजिस्टर भी जब्त कर लेना चाहिए।

ण. डीवीडी/वीसीडी के बिक्री का रजिस्टर भी जब्त कर लेना चाहिए जिससे यह सिद्ध हो सके कि अभियुक्त पाइरेटेड डीवीडी/वीसीडी के अवैध व्यापार

व बिक्री में संलिप्त है तथा ग्राहकों को भी बिक्री करता है।

त. कम-से-कम वीडियो सीडी/आडियो सीडी/डीवीडी खरीदने वाले दो गवाहों के भी बयान 161 दं.प्र.सं. के तहत उनकी वीडियो रिकार्डिंग करते हुए दर्ज करने चाहिए।

थ. घटनास्थल पर ही पाइरेटेड आडियो/वीडियो सीडी/डीवीडी को सीज करना चाहिए।

द. वीडियो सीडी/डीवीडी के कापी राइट का अधिकार रखने वाले का भी बयान दर्ज करना चाहिए कि उसने अभियुक्त को कोई भी ऑडियों/वीडियो अधिकार कापी करने तथा पाइरेटेड प्रति बेचने का नहीं दिया है।

घ. कापी राइट रखने वाले का कापीराइट अधिकार-पत्र की प्रमाणित प्रति भी लेनी चाहिए।

न. यदि अभियुक्त के पास वीडियो लाइब्रेरी एसोसिएशन की सदस्यता कार्ड हो तो उसे भी सीज (जब्त) कर लेना चाहिए।

प. वादी मुकदमा का विस्तृत बयान 161 दं.प्र.सं. के तहत दर्ज किया जाना चाहिए।

फ. कब्जा पुलिस में ली गयी अर्थात् जब्त की गयी वस्तुओं की सूची की एक प्रति अभियुक्त को भी देकर उसके हस्ताक्षर मूल सूची पर करवाने चाहिए।

ब. यदि दुकान या कोई संलग्न कमरा या मकान, जहां निषिद्ध वस्तुओं की तलाश की गई हो, यदि वहां कोई वस्तु नहीं मिलती है तो भी उसकी तलाशी की फर्द बनाकर उसमें साफ-साफ अंकित करना चाहिए कि अमुक स्थान की तलाशी से कोई वस्तु बरामद नहीं हुई, न ही कब्जा पुलिस में ली गई तथा उस पर स्वतंत्र गवाहों के हस्ताक्षर भी करवाने चाहिए।

4. तलाशी और अभिग्रहण (जब्ती) के बाद की जाने वाली कार्रवाई-

क. वीडियो पाइरेसी के स्रोत के बारे में पता लगाना चाहिए। उसकी भी तलाशी लेनी चाहिए तथा वीडियो पाइरेसी के नेटवर्क को तोड़ने का प्रयास करना चाहिए।

ख. जिस परिसर में अपराध हो रहा था अर्थात् जहां पाइरेटेड वीसीडी/डीवीडी तैयार की जाती है या बेची जाती है या वितरित की जाती है, के कर्मचारियों का भी 161 दं.प्र. संहिता के तहत बयान दर्ज करना चाहिए ताकि इस प्रकार की अवैधानिक गतिविधि में अभियुक्त की संलिप्तता की पुष्टि हो सके।

ग. आडियो, वीडियो, सीडी/डीवीडी के निर्माता, वितरक जिनको अवैधानिक रूप से क्षति पहुंचायी जा रही थी, उनका भी परीक्षण करके उनका विस्तार से बयान दर्ज किया जाना चाहिए।

घ. नगर निगम या नगर पंचायत तथा बिजली विभाग से यह रिपोर्ट भी प्राप्त करनी चाहिए कि अभियुक्त द्वारा कापी राइट एक्ट का उल्लंघन करते हुए पाइरेटेड सामग्री का अवैधानिक कारोबार किया जा रहा था।

ड. आरोप-पत्र तैयार करने से पूर्व अभियोजन अधिकारियों से राय मशविरा करके विवेचक द्वारा संपूर्ण साक्ष्य एकत्रित करके ही आरोप-पत्र न्यायालय में भेजना चाहिए।

च. सभी कब्जा पुलिस में ली गई (जब्त की गई) वस्तुओं को अच्छी तरह से पैक करके, सर्वमुहर करके, नमूना मोहर तैयार करके रखना चाहिए ताकि उसे न्यायालय के समक्ष सही ढंग से पेश किया जा सके।

छ. जब्तशुदा पाइरेटेड सीडी का परीक्षण, मूल सीडी/डीवीडी के साथ विधि विज्ञान प्रयोगशाला भेजकर कराना चाहिए।

यह कार्य योजना (एसओपी) अत्यंत लाभकारी है। यदि वीडियो पाइरेसी के मामलों में छापे की कार्रवाई करते समय इसमें दी गई प्रक्रिया का अनुपालन किया जाए तो अपराधियों के विरुद्ध ठोस साक्ष्य एकत्रित किए जा सकते हैं और उन्हें न्यायालय में प्रस्तुत कर अभियुक्तों को सजा दिलाई जा सकती है।

अपराधोन्मूलन में पुलिस का दायित्व

प्रो. मृत्युंजय उपाध्याय
वृंदावन, मनोरम नगर, एल.सी. रोड,
धनबाद–826001, झारखंड

कहावत है कि कानून बनाने वाले से कानून तोड़ने वाला अधिक शक्तिशाली होता है। इसके कारण स्पष्ट हैं कि सज्जन विधि, नियम, मर्यादा के पालन और उसके रक्षार्थ किसी प्रकार की कुर्बानी कर सकते हैं। परंतु चोर, उचक्के, शातिर, बदमाश जान हथेली पर लेकर अपराध जगत में कूदते हैं। वे खतरा मोल ले सकते हैं। विषमताओं, विपरीतताओं से जूझ सकते हैं और परिणाम से निश्चिंत रहते हैं? दंड भोगना। इस पार या उस पार। इस हालत में पुलिस का दायित्व बनता है कि वह इन बातों पर ध्यान दे और इस पर त्वरित कार्रवाई करे।

परंतु यहां परिस्थिति विपरीत दिखाई पड़ती है। पुलिस का जो अधिकार और कर्तव्य जनता के प्रति उत्तरदायित्व है उसमें कमी आ गई है। 1903 ई. में फेजर कमिशन ने टिप्पणी की थी-

'भारत में सामान्य पुलिस कर्मचारी में अपने को शांत रखने, जनता के साथ सम्मानपूर्वक व्यवहार करने, जनता के सामने अपने को यथासंभव प्रिय बनाने की दृष्टि से उचित उपाय करने की कमी पाई जाती है।'

अपराध की सूचना पुलिस को मिलती है, तो सर्वप्रथम वह प्राथमिकी दर्ज करने में आनाकानी करती है। प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज करनी ही नहीं, इसके लिए उत्तरदायी है पुलिस। कारण वह राजनीतिक, अधिकारियों के दबाव या फिर आर्थिक लोभ में पड़ जाती है।

महिला के विरुद्ध विशेषतः लैंगिक अपराधः- अपराध की सूचना मिलने पर पुलिस अधिकारी उसे दर्ज नहीं करते। पंजीकरण हेतु या तो धन की इच्छा जाहिर करते हैं या फिर अपराध के परिवाद को भद्दे तरीके से ग्रहण करते हैं। अपराध से आहत स्त्री के लिए विचारणा, अन्वेषण, तहकीकात की प्रक्रिया, परिणति वेदनापूर्ण, कष्टकारी होती है। न्यायालय में साक्ष्य देने का अनुभव लज्जास्पद और नकारात्मक होता है। एक पीड़िता का अनुभव है, "लैंगिक अपराध की न्याय परीक्षा स्वयं अपराध से भी ज्यादा खतरनाक है। न्यायालय की कार्रवाई ने लैंगिक अपराध की शिकार स्त्री के मनोवैज्ञानिक तनाव और दबाव में ज्यादा वृद्धि की है।"

एक हृदयविदारक रिपोर्ट की ओर ध्यान दिलाया जाता है। विष्णु उर्फ उंद्रया बनाम महाराष्ट्र राज्य सन 2006। एससीसी 203 के मामले में उच्चतम न्यायालय ने मत व्यक्त किया है कि बलात्कार जैसे गंभीर मामले में यदि पुलिस अपराध को पंजीकृत नहीं करती है तो वह प्रधान वाला कृत्य है। इस मामले में पुलिस अधिकारी ने बलात्कार के केस में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज नहीं की थी, जबकि पुलिस अधिकारी को बलात्कार पीड़िता ने स्पष्ट शब्दों में बताया कि उसके साथ अभियुक्त ने बलपूर्वक मैथुन किया। इस पर उच्चतम न्यायालय की टिप्पणी है, "पुलिस अधिकारी का यह कृत्य पुलिस प्रतिष्ठान से जनता के विश्वास को खोने वाला है।" इसमें रिपोर्ट दर्ज नहीं करने वाले पुलिस अधिकारी पर कर्तव्यहीनता, अनैतिकता और अमानवीयता का आरोप लगाया गया था।

सामान्यतः अन्वेषण की कार्रवाई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के दर्ज होने पर होती है। परंतु यह आवश्यक नहीं कि अन्वेषण इसके बिना प्रारंभ ही नहीं किया जाए। वैसे रिवाज है कि प्राथमिकी (एफआईआर) दर्ज होने पर ही अन्वेषण होता है। परंतु उसके बिना भी अन्वेषण हो सकता है बशर्ते अधिकारी प्रभावित न हो।

अन्वेषण में पुलिस की कर्तव्यहीनता और अनुत्तरदायित्व के कारणः- यह देखने में आता है कि पुलिस को प्राथमिकी अन्वेषण, पीड़ित-पीड़िता को न्याय

दिलाने में कोई विशेष रुचि, तत्परता, ईमानदारी नहीं रहती। इसके कारण निम्न हैं:-

(क) नौकरी है। वेतन मिलता है। इतने फायदे की क्या जरूरत है, हाजिरी लगाई गपशप, चाय-पानी, सैर सपाटा। काम समाप्त।

(ख) मनमुताबिक कोच नहीं मिला तो फिर रुचि क्यों ली जाए? बयान उसने कुछ दिया। लिख दिया उसका उल्टा या फिर अप्रासंगिक, बेतुका जो अदालत में पीड़ित पार्टी के खिलाफ चला जाता है।

(ग) अधिकार, मद के दर्प में चूर होकर मनमानी करना।

(घ) किसी राजनैतिक दबाव, असामाजिक तत्वों के धमकाने के प्रभाव के कारण अन्वेषण सही-सही हो नहीं पाया। दलसिंगसराय में एक लुटेरे ने किसी का घर लूट लिया। उसकी पत्नी का अपमान किया। यह मामला कोर्ट में पहुंचा। दारोगा राधा मोहन सिंह ईमानदार और कर्मठ पुलिस अधिकारी थे। वह भुक्तभोगी का बयान लेना शुरू करते हैं कि उनकी पत्नी की रोनी आवाज में फोन आता है।

"मेरे गले पर छुरा लगाकर ये कह रहे हैं कि ठीक-ठीक बयान लिया मेरा गला काट देंगे"। वह पुलिस अधिकारी सकते में आ गए। उन्हें तत्काल कार्रवाई स्थगित करनी पड़ी।

(ड) अपने बड़े अधिकारी का दबाव। प्रोन्नति मे खतरे की संभावना या फिर गोपनीय रिपोर्ट (CCR) में प्रतिकूल टिप्पणी का खतरा।

(च) कानूनी प्रावधान, अधिकार, प्रक्रिया की जानकारी का अभाव या फिर जानबूझकर उसकी उपेक्षा। कानूनी प्रक्रिया का मूल मकसद है कि न्याय प्रशासन और प्रक्रिया पर जनता का पूरा विश्वास हो। यही कारण है कि पीड़ित/पीड़िता का न केवल ईमानदारी से बयान लिया जाए बल्कि उसके मान-सम्मान और अस्तित्व को स्वीकार किया जाए। पीड़ित की कतई किसी हालत में उपेक्षा नहीं हो।

(छ) पुलिस अधिकारी का झूठे अहंकार में रहना कि उसे होना चाहिए पुलिस अधीक्षक और वह हुआ है एक अदना पुलिस निरीक्षक। फिर उसे अपना कर्तव्य निष्ठापूर्वक करने की क्या हड़बड़ी है। यह निराशा हताशा, पराजय और कुंठा से जन्मी आदत है।

पुलिस के कर्तव्यों की समीक्षा, आलोचना:- पुलिस अच्छी तरह जानती है कि बिना स्थानीय व्यक्तियों के सहयोग, सद्भाव और तत्परता के अपराध-नियंत्रण नहीं हो सकता। न हो सकती है उसकी तटस्थ समीक्षा, विवेचना ही अतएवं पुलिस के लिए वांछनीय है।

(क) स्थानीय जनता से संपर्क बनाए रखना:- कभी-कभी पुलिस नागरिक मिलन या किसी सम्मेलन, समारोह के बहाने दोनों में पारस्परिक संवाद। वैसे जनता जानती है कि पुलिस का आतंक, दबदबा, भयादोइन। अकारण किसी को प्रताड़ना संवाद का पहला सोपान होगा उन्हें विश्वास में लेना कि पुलिस उनकी मित्र है, सहयोगी है। समय पर सदा मदद के लिए तत्पर है। उनका दु:ख-सुख जानना उसमें संकोचहीन भाग लेना। फिर वे निर्भय और संकोचहीन होंगे। अपने गांव, समाज, भले-बुरे का हालचाल सुनाएंगे। पुलिस का सुनेंगे। इसी में विधि व्यवस्था, अमन-चैन का सवाल उठेगा। असामाजिक तत्वों की ओर संकेत होगा। ऐसे तत्व ऐसा सम्मेलन, संवाद सुनकर सहम जाएंगे। किसी आयोजन, उत्सव में भी दोनों का संवाद हो सकता है। प्रजातंत्र की सफलता का यह अमोद्य मंत्र है।

पारस्परिकता को प्रोत्साहन एवं संवादप्रियता:- ऐसा होने से अपराध-नियंत्रण तो होगा ही ऐसी स्थिति देखकर अपराधी अदृश्य हो जाएंगे।

अपराध-नियंत्रण में जन सहयोग की भूमिका:- जनता, जनता का सहयोग नहीं करेगी वह अपने भाई-बंधु को अपराधियों से नहीं बचाएंगी तो फिर उसकी रक्षा कौन करेगा अतएव, गांव, कस्बे में पुलिस-जनता का मिलाप, संवाद, विचार-विमर्श जरूरी है। प्रजातंत्र की

जड़ें जनता की धड़कन में हैं। उनकी प्रत्येक गतिविधि में हैं। स्वायत्त शासन में है जिसमें ग्राम पंचायत नगर पालिका आदि शामिल है। डा. येलकर झा का कहना है। "The Deep Root of Democracy Lies There Where Locals Efficiency Prevails Deeper".

(ख) **आठ पहर हुसियारः-** कबीर का मानना है कि यमराज उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकता, जो आठों पहर होशियार, जागरूक रहता है। मान-अपमान, जय-पराजय, अमृत-विष से रहता है निरपेक्षः-

इस जागरूकता का ध्वन्यार्थ है कि जनता में जागृति लाना कि वह पहले सीखे आत्मरक्षा फिर जन सुरक्षा। तब जाकर देश की सुरक्षा यदि क्षेत्राधिकारी अपने इलाके के पुलिस अधिकारियों एवं कर्मचारियों को सामुदायिक पुलिस व्यवस्था के अंतर्गत कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करेंगे तो यह सहज और स्वाभाविक है कि थाना, पुलिस को जन सहयोग मिलेगा और पुलिस के कार्यों की पारदर्शिता अपना असर दिखाएगी। इस उद्देश्य के लिए पुलिस गांव में ग्राम सुरक्षा समितियों तथा शहर में शांति समितियों का गठन कर सकती है तथा जनता को अपने कार्यों से जोड़कर उसका विश्वास अर्जित कर सकती है।

यहां यह भी ध्वन्यार्थ है कि पुलिस को स्थानीय, उत्सवों, धार्मिक जुलूसों, शिक्षण संस्थानों, मंदिरों, मस्जिदों, गिरिजाघरों की अनियमितता, कुव्यवस्था आदि पर ध्यान देना चाहिए।

उनके कार्य क्षेत्र में कानूनी अव्यवस्था, अराजकता, उत्पाद आदि पर पुलिस का ध्यान रहना चाहिए इनके कार्यक्षेत्र में जुआबाजी, सट्टा, मटका का खेल, नाजायज शराब बिक्री अन्य मादक पदार्थों की तस्करी जैसे गैर कानूनी कार्य होते हैं। इनमें पुलिस की भागीदारी, उसका संरक्षण, उसकी ओर ध्यान न देना, न दिलाना भी रहती है। पर ध्यान रहे ऐसे अपराध, अपराधियों का उन्मूलन होना चाहिए। पुलिस इसे प्रतिष्ठा का प्रश्न बनाए और इसका जड़ से सफाया करे।

शैक्षणिक संस्थाओं में व्यापारः- पुलिस अच्छी तरह जानती है कि उसके शहर में इंजीनियरिंग कालेज, मेडिकल कालेज आदि डोनेशन के नाम लाखों वसूलते हैं और थाने तथा पुलिस मुख्यालय में उसका कुछ अंश नियमित भिजवाती हैं। यह भी घोर अपराध है इस पर अविलंब नियंत्रण होना चाहिए।

प्रभुता पाई काह मद नारिः- प्रभुता मिले, अधिकार मिले, तो कौन मदमस्त नहीं होता। पुलिस को अधिकार मिला है तो मद भी मिला है। डा. एक्टथ मानते हैं सभी सत्ताएं, भ्रष्टाचार के कारण हैं जितनी स्वतंत्र व निरंकुश सत्ता, उतनी स्वेच्छाचारिता उतना भ्रष्टाचार।

"All Power Corrupts and Absolute Power Corrupts Absolutely".

ध्यान रहे जहां अधिकार है, सत्ता है, मद है, वहां कर्तव्य पालन भी है। उत्तरदायित्व का निर्वाह भी है।

अतएव पुलिस को ध्यान रखना चाहिए कि वह मान, मर्यादा, यश, प्रतिष्ठा, प्रोन्नति, लोकप्रियता चाहती है, तो अपराध पर जी जान लगाकर नियंत्रण रखना होगा। उसकी उपस्थिति से असल में असामाजिक तत्वों को ज्ञात हो जाए कि प्रकाश के आगे अंधकार की सत्ता भला कैसे ठहर पाएगी। वह पहले एक सामाजिक प्राणी है, एक नागरिक है। कानून से बंधा है उस पर कानून का रक्षक है फिर उसके सामने अपराध भला हो कैसे सकता है। अज्ञेय का मानना है "खतरा बुरे की ताकत के कारण नहीं है, भले की साहसहीनता बहुत बड़ी बुराई है। बादल के रहने से रात नहीं होती, सूरज के अस्त होने से होती है।" पुलिस को कभी कमजोर और निस्तेज नहीं होना है चाहे जो भी विपताएं आएं।

मरी नहीं जीवित है मिट्टी से डरने वालों सेः- पृथ्वी है वीरता। यहां वीरों का तेज, पराक्रम, साहस और वीराया है पुरुष के पौरुष की पहचाना। मुझे याद है कि राष्ट्र कवि दिनकर ने भागलपुर में एक बार पुलिस के एक विशाल आयोजन में भाग लिया था। वहां उन्होंने पुलिस को संबोधन में कहा था कि पृथ्वी मिट्टी से डरने

वालों से जीवित नहीं है। वह उसे जलाकर, पिघलाकर सोना बनाने वालों से जीवित है। ग्रीष्म की पंचाग्नि के उत्ताप से योगी तो निकल भागता है, पर भोगी (सामान्य जन वीर, कर्मठ) उसे तपाकर रसपान करते हैं। परम आनंद का अनुभव करते हैं। यह संकेत पुलिस के पौरुष और पराक्रम की ओर है। पंक्तियां निम्नलिखित है:-

मरी नहीं जीवित
मिट्टी से डरने वालों से
वह जीवित है
उसे फूक
सोना करने वालों से।

ज्वलित एवं पंचाग्नि जगत से निकल भागता योगी धुनि बनाकर उसे तपाता रसभोगी। आज के संघर्ष और आपाधापी के युग में पुलिस से ऐसे ही अपेक्षा की जाती है। तभी अपराध-नियंत्रण और अमनचैन संभव है।

संदर्भ

1. दंड प्रक्रिया संहिता विधि : महावीर प्रसाद, 2006, साहित्य प्रकाशन, नई दिल्ली

2. संस्कृति के चार अध्याय : रामधारी सिंह दिनकर

3. पुलिस विज्ञान, अक्टूबर-दिसंबर 2013 और जनवरी-मार्च 2014, नई दिल्ली 110003

4. विकासशील समाज और पुलिस : रमेश प्रसाद दुबे, 1978, सर्विसेज पब्लिशिंग हाउस, भोपाल

5. अपराध शास्त्र एवं दंड प्रशासन : ना.वि. परांजपे, 2003 सेंट्रल पब्लिकेशंस, इलाहाबाद

6. सांप्रदायिक दंगे और पुलिस : विभूति नारायण राय, किताबघर, अंसारी रोड, नई दिल्ली-110002

7. पहचान और परख : डा. मृत्युंजय उपाध्याय 2007, कैथोलिक चर्च प्रेस, चर्च रोड, रांची-834002

8. सेंट्रललाइजेशन वर्षेज डीसेंट्रललाइजेशन डा. चेटकव झा, पटना

लाल बत्ती पर रोक

डा. बसंतीलाल बाबेल
पूर्व न्यायाधीश एवं शासन उप सचिव गृह (विधि)
राजस्थान सरकार

पिछले कुछ वर्षों से वाहनों पर लाल बत्ती का क्रेज बना हुआ है, या यों कह दें कि एक फैशन बन गया है। लाल बत्ती वाले वाहन में बैठा व्यक्ति अपने-आपको एक अलग-थलग व्यक्ति मानता है। कई बार यह अहंकार का कारण भी बन जाता है। पिछले कुछ समय से लाल बत्ती का जमकर दुरुपयोग होने लगा है। अधिकांश जन प्रतिनिधि एवं अधिकारी अपने वाहनों पर लाल बत्ती लगाए हुए हैं, चाहे वे इसके पात्र हों या न हों। यहां तक कि अनेक जन प्रतिनिधियों एवं अधिकारियों ने तो अपने निजी वाहनों पर भी लाल बत्ती लगाना प्रारंभ कर दिया। जिस उद्देश्य एवं अवधारणा को लेकर लाल बत्ती का प्रावधान किया गया वह धूमिल होने लग गया। लोकतंत्र के लिए यह एक मजाक बन गया 'अति सर्वत्र वर्जयेत' अर्थात् अति सदैव बुरी होती है। मामला उच्चतम न्यायालय तक पहुंच गया।

'अभय सिंह बनाम स्टेट आफ उत्तर प्रदेश' (ए.आई.आर. 2014 एस.सी. 427) का लाल बत्ती पर एक ऐतिहासिक मामला है। इस मामले मे एक शब्द प्रयुक्त किया गया है। "उच्च पदस्थ व्यक्ति" (High Dignitaries) संपूर्ण मामला इसी शब्द के इर्द-गिर्द घूमता है। हमारे संविधान में कुछ व्यक्तियों को उच्च पदस्थ व्यक्ति माना गया है। उन्हें संवैधानिक दर्जा प्रदान किया गया है। उनकी सुरक्षा का जिम्मा केंद्रीय एवं राज्य सरकारों को सौंपा गया है। सुरक्षा की दृष्टि से लाल बत्ती वाहन उच्च पदस्थ व्यक्ति के होने का संकेत देती है। जब लाल बत्ती वाहन मार्ग से गुजरता है तो सुरक्षाकर्मी सचेत एवं सावधान हो जाते हैं।

अब प्रश्न यह है कि उच्च पदस्थ व्यक्ति किसे माना जाए? केंद्रीय मोटर यान नियम 1989 के नियम 108 के उप नियम (1) में यह कहा गया है कि–"कोई भी मोटर यान अपने आगे के भाग से निम्नांकित के सिवाय लाल बत्ती का प्रयोग नहीं करेगा जिसमें केंद्रीय सरकार या राज्य सरकार द्वारा समय-समय पर निर्दिष्ट उच्च पदस्थ व्यक्ति बैठा हो।"

No Motor Vehicle shall show a Red light to the front other than a Vehicle carrying high dignitaries as specified by the Central Government and the State Government as the case may be from time to time.

इन नियमों के अंतर्गत केंद्रीय सरकार द्वारा एक अधिसूचना एस.ओ. 52 (ई) दिनांक 11 जनवरी, 2002 जारी की गई, जिसे अधिसूचना एस.ओ. 1070 (ई) दिनांक 28 जुलाई, 2005 द्वारा संशोधित किया गया। इसमें राजकीय कार्य के दौरान वाहन पर चमकदार लाल बत्ती का प्रयोग करने के प्रयोजनार्थ निम्नांकित को उच्च पदस्थ व्यक्ति माना गया है-

(क) राष्ट्रपति
(ख) उपराष्ट्रपति
(ग) प्रधानमंत्री
(घ) पूर्व राष्ट्रपति
(ड) उप प्रधानमंत्री
(च) भारत का मुख्य न्यायाधीश
(छ) लोकसभा अध्यक्ष
(ज) संघ के केबिनेट मंत्री
(झ) योजना आयोग का उपाध्यक्ष
(ट) पूर्व प्रधानमंत्री
(ठ) लोकसभा एवं राज्यसभा में विपक्ष के नेता
(ड) उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश

इनके अलावा निम्नांकित व्यक्तियों को बिना चमकदार लाल बत्ती का प्रयोग करने का पात्र माना गया है–

(1) मुख्य निर्वाचन आयुक्त
(2) भारत का नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक

(3) राज्यसभा का उपसभापति

(4) लोकसभा का उपाध्यक्ष (डिप्टी स्पीकर)

(5) संघ के राज्यमंत्री

(6) योजना आयोग के सदस्य

(7) भारत का एटार्नी जनरल

(8) केबिनेट सचिव

(9) तीनों सेनाओं के प्रमुख

(10) केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण का अध्यक्ष

(11) अल्पसंख्यक आयोग का अध्यक्ष

(12) संघ के उपमंत्री

(13) तीनों सेनाओं के कार्यकारी प्रमुख

(14) अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आयोग का अध्यक्ष

(15) संघ लोक सेवा आयोग का अध्यक्ष

स्पष्ट है कि उपरोक्त उच्च पदस्थ व्यक्तियों के वाहनों पर ही लाल बत्ती का प्रयोग किया जा सकता है, अन्य वाहनों पर नहीं। इन्हें एस्कोर्ट करने वाले वाहन नीली बत्ती का प्रयोग कर सकेंगे।

निर्णय में न्यायमूर्ति जी.एस. सिंघवी द्वारा यह भी कहा गया है–हमारा संविधान व्यक्ति विभेद नहीं करता है। इसमें सभी व्यक्तियों को सम्मान दिया गया है। उच्च पदस्थ व्यक्ति केवल उन्हें माना गया है जो संवैधानिक पद धारण करते हैं। उनके वाहनों पर लाल बत्ती का प्रयोग किए जाने के भी यही कारण है।

लोकतंत्र में जन प्रतिनिधियों एवं लोक सेवकों का मुख्य कार्य जनता की सेवा करना है, आडंबर व प्रदर्शन करना नहीं। उनकी पहचान उनके कार्यों से होती है, लाल बत्ती के प्रयोग से नहीं। जन प्रतनिधि व लोक सेवक लाल बत्ती के मोह को छोड़ें। लाल बत्ती की संस्कृति लोकतंत्र की नहीं है। अनावश्यक एवं अनाधिकृत लाल बत्ती का प्रयोग एक ओछी मानसिकता है।

दस्तावेजों/अंगुलचिह्नों और मौका–ए–वारदात के दृश्यों की फोटोग्राफी

श्रीमती बृजबाला ठाकुर
ई–107, शास्त्रीनगर, मेरठ-250004

संसार दृश्य, जगत और आवाज का प्रकट रूप है। शब्द आवाज का वाहक और जीवन गति का स्वरूप है। 'प्रत्यक्ष को प्रमाण क्या।' वाली कहावत चरितार्थ करती है कि वह दृश्य उपस्थित था, मौजूद था। अतएव इसी तत्व को विडियोग्राफी और आवाज को ज्यों का त्यों कैमरे में कैद करके वही तस्वीरें आवाज सहित पुनः देखने व सुने जा सकते हैं–फोटोग्राफी के द्वारा। जो कि फोटोग्राफी का ही परिमार्जित रूप है। साक्ष्य के लिए इनका प्रयोग भविष्य में किया जा सकता है। जिसमें समय व काल के कारण कोई परिवर्तन नहीं होता। न ही इनमें कोई फेरबदल की जा सकती है। सत्य की तह तक पहुंचने के लिए दस्तावेजों, अंगुल चिह्नों की फोटोग्राफी के माध्यम से इनका प्रयोग करके निरापद सत्य की खोज की जा सकती है। अपराधों का अपराधी से संबंध, अपराध घटित हुआ है। कब, कहां, किसके द्वारा, क्यों और किसने किया है–का पता जान लेने पर इन्हीं फोटोग्राफ्स को कोर्ट में साक्ष्य के समय उन्हें दर्शाया जाता है। अन्य साक्ष्यों के साथ-साथ अपराध सिद्ध होने पर न्याय दिलाया जाता है जिससे संविधान की रक्षा की जा सकती है। मौलिक अधिकारों की रक्षा की जा सकती है। संदिग्ध आरोपी को अपराध से मुक्त सिद्ध करके उसके दैहिक स्वतंत्रता प्रदान करके, उसे निर्दोष सिद्ध करके। इसके लिए न्यायाधीश को एक ठोस आधार चाहिए जिसको नंगी आंखों से देख कर उसकी गुणवत्ता को बखूबी समझा और परखा जा सकता है जिसे देखकर एक साधारण व्यक्ति भी उसे समझ-बूझकर किसी नतीजे पर पहुंच सकता है। ऐसा ठोस सबूत अपराध संबंधित फोटोएंलार्जमेंट्स प्रदान करते है।

कभी भी संसार में रहकर पूर्ण अपराध मुक्त समाज की परिकल्पना भी नहीं की जा सकती है, क्योंकि मानव दो ध्रुवीय सत्ता है जिसका एक छोर देवत्व की तरफ तो दूसरा दानवता की तरफ होता है। इस समय विश्व विनाश के कगार पर खड़ा है। मानव वृत्तियों में बदलाव ला पाना केवल ईश्वरीय प्रेरणा से ही संभव हो सकता है। वह भी तब जब वह अपनी और मुड़कर अपनी कमजोरियों और कमियों की तरफ ध्यान दें और स्वयं में सुधार कर पाने के लिए आकुल व्याकुल होकर प्रयत्नशील बन जाए तो सुधार हो सकता है और विश्व-बंधुत्व और विश्व कुटुंबकम का भाव पैदा कर सकता है। प्रत्येक राष्ट्र को विश्व शांति की तलाश है जिसका जवाब भी मनुष्य के पास ही है। प्रत्येक इकाई सुधरे तो विश्व भी अपने आप सुधर जाएगा।

ऐसे ही समाज विरोधी तत्वों से सुरक्षा और शांति प्राप्त करने के लिए ही केंद्रीय और राज्य सरकारों के द्वारा पुलिस विभाग का संचालन किया गया है। यही एक ऐसा ठोस संगठन है जो कि मजबूत, सक्रिय और उपयोगी है। जिसकी लाख निंदा करिए कमियां खोजने के प्रयास करिए परंतु इसका कोई विकल्प नहीं।

इसी कारण इसी को और मजबूत, उपयोगी तथा सक्रिय बनाने के लिए हरसंभव प्रयास किए जा रहे हैं और नित नई पुलिस विकास की नीतियां "पुलिस अनुसंधान और विकास ब्यूरो के द्वारा बनाई जा रही और अनुभव में लाई जा रही है। पुलिस को सुव्यवस्थित तथा कारगर बनाने के लिए ही इसको स्थापित गया गया। गृह मंत्रालय द्वारा स्थापित इस ब्यूरो द्वारा पुलिस के हर क्षेत्र में नए–नए अनुसंधान करके उसका विकास किया है और कर रही है। ताकि समाज की विनाशकारी कृतियों वाले लोगों उनकी जान-माल सहित सुरक्षा की जा सके तथा अपराधों की रोकथाम करके पीड़ितों को

न्याय दिलाया जा सके, जिससे भयमुक्त समाज की स्थापना करके शांति स्थापित की जा सके। ताकि देश उन्नति और विकास की तरफ अग्रसित होवे।

ऐसा करने के लिए ही समूचे देश में विधि विज्ञान न्यायिक विज्ञान की प्रयोगशालाओं का जाल बिछाया गया है। ताकि देश का पुलिस संगठन क्षमतावान और अधिक सक्षम बनकर संविधान की रक्षा कर सके और अपराधों की धरपकड़ शीघ्र कर सके। विभिन्न फोरेंसिक जांचों की रिपोर्ट में विलंब होने के कारण कई बार चार्जशीट कोर्ट में दाखिल करने में बहुत देरी हो जाती है। इसलिए वि.प्रो. को अब ज्यादा संख्या में बढ़ाकर उनकी गुणवत्ता और उसकी किस्म और उपयोगिता को बढ़ाया जा रहा है। जिसमें हर फोरेंसिक लैब न्यायिक प्रयोगशाला में एक-2 फोटोग्राफी का विभाग है जो कि बहुत अधिक क्षमतावान और उपयोगी कैमरों से लैस व विभिन्न उपकरणों द्वारा सुसज्जित रखा गया है जिसमें सूक्ष्म-से-सूक्ष्म वस्तुओं की परख के लिए एक-एक दूरबीन माइक्रोस्कोप और अच्छे-2 फोटोग्राफी के नए-2 कैमरे रखे गए हैं जिनसे विशेषज्ञ चित्रों को उबार कर जरूरत के हिसाब से एनलार्ज करता जाता है अपनी ही लैब में विशेषज्ञों द्वारा चित्रों को हस्तलेख व अंगुल चिह्न वाले फोटोग्राफ्स को अपने कोर्ट के बयान में यह बताते हैं कि उन्होंने यह चित्र स्वयं या अपनी देखरेख में लिए थे उनके नेगेटिव स्वयं तैयार किए थे, जिनसे स्वयं फोटो बनाए और एनलार्ज किए वह फोटोग्राफ और नेगेटिव उक्त गवाह विशेषज्ञ की आख्याओं का एक महत्वपूर्ण भाग होता है। जिस पर कि प्रतिपक्षी अपने प्रश्न पूछते हैं तथा कोर्ट भी मामलों में संतुष्टि प्राप्त करके ही न्याय देते हैं।

अत: देश में विधि विज्ञान/न्यायालयिक विज्ञान की प्रयोगशालाओं Central Forensic Science Libraries की आवश्यकताओं और जरूरतों को बढ़ावा दिया गया है जिससे अपराधों के निपटान Criminal Justice System को अधिक क्षमतावान, उपयोगी और शीघ्र मामलों के निपटाने में तेजी लाई जा सके जिससे न्याय को शीघ्र दिलाया जा सके और कानून द्वारा किए गए मौलिक अधिकारों की भी रक्षा की जा सके।

विधि विज्ञान का इतिहास लगभग 150 वर्ष पुराना है। परंतु इसका विकास अभी भी हो रहा है। सन् 1849 में मद्रास, 1853 में कलकत्ता में सन् 1863 में आगरा तथा 1864 में मुंबई में रासायनिक जांच के लिए प्रयोगशालाएं खोली गई थीं। सन् 1897 ई. में कलकत्ता में फिंगर प्रिंट ब्यूरो की स्थापना की गई। देश के ही एक इंस्पेक्टर अजिजुल हक तथा हेमचंद्र बोस ने आठ अंगुलियों द्वारा अपराध को अपराधियों से जोड़ पाने का विश्वसनीय और सटीक उपाय फिंगर प्रिंट में गणितीय विधि ढूंढ़ निकाली थी। सन् 1952 ई. में कलकत्ता में विधि विज्ञान प्रयोगशाला विधि विज्ञान प्रयोगशाला की स्थापना की गई थी। उसके तीन वर्ष पश्चात कलकत्ता में ही केंद्रीय फिंगर प्रिंट ब्यूरो खोला गया था। सन् 1957 ई में गृह मंत्रालय के अंतर्गत केंद्रीय विधि-विज्ञान प्रयोगशाला का गठन हुआ। सन् 1968 ई. में नई दिल्ली में भी केंद्रीय जांच ब्यूरो के लिए विधि-विज्ञान प्रयोगशाला में विधि छायांकन Forensic Photography का विभाग भी खोला गया है।

यहां तक कि आजकल अनेक विश्वविद्यालयों तथा पुलिस ट्रेनिंग कॉलेजों में विधि छायांकन (Forensic Photography) का विभाग खोला गया है और उनका पाठ्यक्रम सफलतापूर्वक और सुचारु रूप से पढ़ाया भी जा रहा है। जिससे समाज विरोधी तत्वों का पता लगाने और अपराधों को पकड़ने के लिए फोटोग्राफी का खूब-खूब अधिकाधिक सहारा लिया जा रहा है। अब यह फोरेंसिक विभाग का एक विशेष अंग बनाया गया है।

अंगुलछाप और अभिलेखों का परीक्षण और उनकी तुलना करने के लिए अभिलेख डाक्यूमेंट फोटोग्राफी स्वयं में एक कला और विज्ञान दोनों ही है।

यह परीक्षण और उसकी तुलना को नई, शक्ति, स्फूर्ति और जीवन देती है। जिसमें सूक्ष्म तत्व मूर्त रूप होकर आंखों के आगे स्वत: प्रकट होते हैं और उनकी सत्यता की सराहना की जा सकती है, उनकी सत्यता को आंखों से जाना-बूझा और परखा भी जा सकता है। इसके लिए अच्छा बढ़िया कैमरा और उसका लेंस पावरफुल और फिल्म भी धीमी गति वाली होनी चाहिए। जिससे लेखन की लाइन व उनकी क्वालिटी की गुणवत्ता को देखा और परखा जा सके। काली और सफेद स्याही का कंट्रास्ट यह किसी भी आम आदमी की समझ में आ सकता है। जिसे देखकर उसकी चारित्रिक गुणों को जान सकते हैं और इन्हें कोर्ट में दर्शाया भी जा सकता है। इस तथ्य को दर्शाने के लिए फोटोग्राफर एक्सपर्ट को कैमरे के प्रयोग करने की भरपूर जानकारी होनी चाहिए कि कौन-से रोशनी वाले लैंस के साथ कैसा फिल्टर कब, कहां और कैसे प्रयोग किया जा सकता है। किस प्रकार से एक लाल स्टैंप पर लिखे नीली या काली स्याही से फोटो ऐसे खींचा जाए जो लाल स्याही को हल्का कर दिखाया जा सकता हो तथा केवल स्याही की लिखावट को उजागर किया जा सके कि उस पर लिखे गए हस्ताक्षर सामान्य है या कहीं से उन्हें उठाकर दोबारा किसी अन्य कागज पर चिपकाया गया है। यह सत्य दिखलाया जा सके कि उनका हस्ताक्षरों का प्रयोग जालसाजी के लिए किया गया है। यह कि वह सामान्य कुदरती तरीके से लिखे गए हैं और सही हैं, के तथ्यों को सुलझाया जा सके।

सामान्य फोटोग्राफी केवल काली और सफेद स्याही का कंट्रास्ट देती है तथा साधारण सामान्य फोटोग्राफी में काली-नीली स्याही सफेदी के लिए ग्रे रंग की और लाल स्याही काली प्रतीत होती है। नतीजा यह है कि स्टैंप पर लिखे गए हस्ताक्षर ग्रे रंग के और टिकट का भाग काले रंग का दिखाई देगा। इस प्रकार से काले और सफेद का कंट्रास्ट कम हो जाएगा। रंगीन लेंस के साथ फिल्टरों के प्रयोग से सफेद काले का कंट्रास्ट एकदम सही और साफ चमकेगा, जिससे हस्ताक्षर कूट रचित है, पर यह स्वाभाविक और सही है का पता उसकी लिखी लाइन क्वालिटी से लग जाएगा। यह केवल फोटोग्राफी के कारण ही पकड़ में आते हैं।

अतएव वर्तमान में अधिकांश केसों में वादों/मामलों में जरूरी लिखाई व लेखन हस्ताक्षर में परीक्षण और उसकी तुलना करने में न्यायालयों ने फोटोग्राफी को बड़ी महत्ता दी है। उसकी बढ़ती न्यायलिक जरूरत को जाना है। यह बात कैसे इसके लिए Ruling : The Privacy Council Ruling Keserbai v/s Jethabai (AIR 1928) Settles the matter में स्पष्ट की गई है।

The use of Photographs as an evidence कानूनी साक्षी के लिए फोटोग्राफी का प्रयोग केस, स्टेट/मिलर में कहा है कि कोर्ट को जब किसी व्यक्ति, वस्तु, उसकी लोकेशन के विषय में न्यायाधीश को साफ-साफ जानकारी देनी चाहिए जो कि मौखिक साक्षियां कोर्ट को प्रदान नहीं कर सकती है, के लिए फोटोग्राफी साक्षी की तरह उपयोग में लाया जा सकता है जिसे शब्दों के द्वारा बयान नहीं किया जा सकता, क्योंकि कोर्ट को जब यह विश्वास हो जाता है कि मौजूदा दिया गया, फोटोग्राफ ट्रिक फोटोग्राफी, ट्रिक के द्वारा तैयार नहीं किया गया है कि वह वास्तविक परिस्थिति में उसी नेगेटिव से ही तैयार किया है जिसको उस लोकेशन पर खींचा गया था। उसी एक्सपर्ट फोटोग्राफर द्वारा भी स्वीकारा है। जिसके लिए केस श्री रामा रेड्डी, पत्नी श्री वीवी गिरी में न्यायाधीशों की यह राय है कि अब समय आ गया है कि फोटोग्राफी भी साक्ष्य में स्वीकार की जाए। यह पहले भी साक्ष्य के लिए प्रासंगिक थी और आज भी है। अब यह पहले से भी ज्यादा उपयोगी है और आज की जरूरत है, क्योंकि किसी भी विवादास्पद विषय को याद करके बताना कठिन होता है और याददाश्त समय के साथ-साथ धुंधली और क्षीण भी पड़ जाती है। यदि वह फोटोग्राफ जिस मामले में उसका सबूत बनाया जाता है तो उसमें बताया

जाए कि फोटोग्राफर ने मैकेनिकल डिवाइस अपनाकर उस स्थिति, व्यक्ति ने, उक्त स्थिति, व्यक्ति के फोटोनेगेटिव तैयार करके उन्हीं को एंलार्ज करके मौजूद चित्र बनाए हैं जो साक्ष्य के लिए Exhibit करके संलग्न किए जाते हैं। तो बयान देते समय और वह उस व्यक्ति फोटोग्राफर एक्सपर्ट के बयान का एक भाग माना जाएगा। उस पर प्रतिपक्षी वकील Cross Examination के लिए सवाल पूछ सकता है और जूरी भी सवाल कर सकती है। Expert द्वारा कोर्ट में बयान कोर्ट को देने के साथ-साथ वह अपने द्वारा तैयार किए गए नेगेटिव व फोटो को भी Exhibit करा करके कोर्ट को प्रदान करता है। जिसे उसके बयान का भाग मानकर आगे बढ़ा जाता है। जबकि तस्वीर स्केच जो मौका–ए–वारदात पर तैयार किया जाता है वह भी क्राइम सीन का अहम भाग है। वस्तु स्थिति का सही जायजा यही स्केच सही जानकारी बयान करता है तथा वाक्यों को विश्लेषण भी किया जाता है। अनुसंधानकर्ता द्वारा एकित्रत साक्ष्यों का मूल्य साक्ष्य की किस्म गुणवत्ता की बाहुलता को एकत्रित करने का ही नहीं है, बल्कि उसका मौका-ए-वारदात से संबंध को विधिपूर्वक लिए गए नोटिस द्वारा दर्शाया भी जाना चाहिए। तभी उन फोटोग्राफ्स की साक्ष्यों में उपयोगिता होती है। अंगुलछाप और हस्तलेख विशेषज्ञ कोर्ट में साक्षी देते समय फोटोग्राफ्स पर जरूरी नोट्स और अपनी टिप्पणियों/ कमेंट्स को भी लाल स्याही से फोटोग्राफ्स पर लिखते हैं।

क्योंकि फोटोग्राफी के द्वारा किसी दुर्घटना की उचित और सही जानकारी, अंगुलछाप तकनीक, प्रलेखों की जानकारी उनमें की गई हेराफेरी, जालसाजी, पदचिह्नों व अंगुल छाप चिह्नों का सूक्ष्मतापूर्वक निरीक्षण, परीक्षण स्थायी रूप से किया जा सकता है और उनको एक ठोस सबूत के रूप में न्यायालय में दर्शाया जा सकता है और देर तक उनको जैसे का तैसा संजोया जा सकता है। जिसमें समय के कारण कोई फेरबदल भी नहीं की जा सकती है। जिससे अणु पदार्थों तक का सूक्ष्म परीक्षण और पहचान करने पर अपराधी को अपराध से जोड़ पाने में सहायता की जा सकती है।

कुछ समय पूर्व सर्वप्रथम पुलिस के सम्मुख समस्या थी कि अपराध किस प्रकार का हुआ है। यह दर्शाने की कि इसमें कौन दोषी है। इसी कारण से 14 फरवरी, सन् 1929 ई. को शिकागो में एक सभा में एक अपराध अभियान प्रयोगशाला के निर्माण का प्रस्ताव रखा गया था। प्रायः सभी देशों में शनैः-शनैः ऐसी-ऐसी कई प्रयोगशालाएं निर्मित की गईं। जिनमें केवल दो उपकरणों की आवश्यकता न्याय संबंधित समस्याओं को सुलझाने के लिए प्रयोग में की गई थी। कैमरा तथा सूक्ष्मदर्शक यंत्र इसके अतिरिक्त अन्य कई यंत्र भी काम में लाए जाते थे, क्योंकि अभियान के चित्रों तथा अनुचित्रों को माइक्रो फोटो का बहुत महत्व है। अपराध के नाना प्रकार की तकनीकों से चित्र लिए जाते हैं। जो कि पुलिस कार्य में ठोस प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। गवाही कि गवाह ने अपनी गवाही में पूर्ण तथा सतर्क रह कर सत्य बोला है परंतु गवाह अपने नेत्रों से देखा गया तथ्य कभी भी भूल सकता है और सूक्ष्मतापूर्वक सही-सही बयान नहीं भी कर सकता है क्योंकि समय बीतते-बीतते याद में भूल और दृष्टि में व्याख्या की कमी अवलोकन क्षमता भी घट सकती है। ऐसी स्थिति में केवल फोटोग्राफ के माध्यम से संपूर्ण दृश्य ज्यों-का-त्यों वर्णित किया जा सकता है। फोटोग्राफी चित्रों के द्वारा पुलिस व न्यायाधीशों को संलग्न वस्तु विशेष की आयु, पालन पोषण, स्वास्थ्य, लिंग, सभ्यता तथा उस क्षण की उत्तेजना का उचित ढंग से विस्तरण दिया जा सकता है। परंतु एक मौखिक साक्षी इतना, सत्य, सटीक, सूक्ष्म वर्णन जिह्वा से नहीं कर सकती।

ऐसी बहुत कम संभावनाएं हैं कि कोई व्यक्ति घटना पर मौजूद दो अलग-अलग मनुष्य एक जैसा तर्क दे सकें। परंतु घटना का चित्र द्वारा अवलोकन स्थायी तथा एक पक्षीय होगा और असत्य अवलोकन से मुक्त भी होगा।

फोटोग्राफी साक्षी का एक स्थायी रिकार्ड होता है जो कभी भी किसी समय भी सत्यता की पुष्टि के लिए प्रयोग किया जा सकता है। वास्तव में पुलिस रिपोर्ट और फोटोग्राफी अब एक-दूसरे के पूरक और एक दूसरे से संबंधित हैं। परंतु यह बात भी कि अपराध किस प्रकार का है पर निर्भर करता है कि चित्र लिए जाएं।

सन् 1914 ई. में विश्व युद्ध में ऐसा देखा गया था कि विदेशी शरणार्थियों ने झूठे पासपोर्ट तैयार किए थे। यह पासपोर्ट रासायनिक ढंग से पुराने पासपोर्टों को मिटाकर तैयार किए गए थे। मिटाकर पुनः लेखन को Ultra Violet Rays तथा कैमरा के चित्रों से पकड़ा गया था, क्योंकि उसमें क्षमता है कि वह बारीकियों को उजागर कर सकती है। इसके अतिरिक्त प्रेस कैमरा, 35 मि. कैमरा चलचित्र कैमरा तथा नाना प्रकार के अन्य कैमरे, एक्सपोजर, मीटर, फिल्में प्रकाश के लिए फ्लैश अवरक प्रकाश (Infra Red Light) पराबैंगनी प्रकाश (Ultraviolet Rays Lights) और Enlarger-2 का प्रयोग तथा संभव आवश्यकतानुसार किया जा रहा है।

वर्तमान में फोटो चित्र किसी व्यक्ति की पहचान का आधार कार्ड पहचान का सबसे उत्तम माध्यम है। इसमें (फिंगरप्रिंट अंगूठे के निशान) एवं आंखों की पुतलियों के निशान भी आधार कार्ड पर दर्ज किए जाते हैं।

पहचान का आधार केंद्र सरकार में चार साल पहले नंदन नील केणि के प्रोजेक्ट पर काम करना शुरू किया। बायोमीट्रिक कार्ड में 12 अंकों के अंदर ही व्यक्ति की समस्त पहचान दर्ज है। इनमें आंखों की पुतलियों का रंग व निशान भी दर्ज होते हैं। जिसके कारण किसी भी लावारिस लाश की पहचान हो सकती है। इसे आनलाइन करने की योजना बन पाने से लावारिस लाश की फिंगर प्रिंटों द्वारा पहचान की जा सकती है।

अंगुली चिह्नों के पोरों पर छोटे-छोटे रोम छिद्र होते हैं जिनसे पता लगाया जा सकता है कि किसी दस्तावेज पर अंगुली निशान मरने के बाद लगवाए गए थे या बाद में। यह भी चित्रों द्वारा ही जान पाना संभव है। कुशल फोटोग्राफर पोरों के निशानों का सही-सही विवरण फोटोग्राफ एंलार्जमेंट द्वारा दे सकते हैं।

सही स्पष्ट अंगुली चिह्नों की रेखाओं गुणों का परस्पर मिलान किया जा सकता है विवादित और नमूना अंगुली चिह्नों के द्वारा फर्जी दस्तावेजों पर अंगुली निशान, अस्पष्ट लगवाए जाते हैं ताकि उनकी पकड़ न हो सके। अस्पष्ट निशानों पर कोई राय नहीं दी जा सकती।

चित्रों के द्वारा ही किसी भी लेखन में हेराफेरी जालसाजी लेख का दस्तावेजों में बढ़ाना, घटाना, मिटाकर पुनः लिखना जैसी समस्याओं को समझाने के लिए अल्ट्रावाइलेट रेज लैंप से खींचे गए फोटोग्राफ्स द्वारा सुलझा दिया जाता है जिसको नंगी आंखों से भी देखा जा सकता है। सामान्य फोटोएंलार्जमेंट्स में हस्ताक्षर कूट रचित हैं या सामान्य की परख उनकी लिखाई में पाई गई थरथराहट, हिचकिचाहट और पेन स्टापों और पैन पोजों, पैन रिटचों द्वारा देखी जाती है जो कि फोटो एंलार्जमेंट्स के द्वारा ही संभव है।

इसके अतिरिक्त फोटो का प्रयोग कई कानूनी जरूरत को पूरा करते हैं:-

1. क्राइम सीन का पता देते हैं।

2. क्राइम सीन की याददाश्त मेमोरी को रिफ्रेश करने के लिए।

3. केस की प्रोग्रेस की जानकारी के लिए।

4. Modus Operandi of the offender की जानकारी के लिए।

5. रिकार्ड तैयार करने के लिए।

6. जजों और वकीलों को लेखन अंगुलछाप के सूक्ष्म गुण, अवगुणों की जानकारी देने के लिए/दर्शाने के लिए।

7. भय और लालच के कारण बयान देने से मुकर

गए लोगों गवाहों के लिए चित्र दिखाकर याद दिलाया जाता है। गवाह का प्रतिपक्षों Hostile बनने का कारण स्पष्ट करते हैं। उन पर प्रतिपक्षी बन जाने पर रोक लगाने के लिए चित्र मददगार सिद्ध होते हैं।

8. केवल दो जोड़ी फिंगर प्रिंट्स के द्वारा गाजियाबाद के एक जीवित अपराधी को पुलिस ने धरपकड़ा जिसे मृत घोषित किया जा चुका था। मृत्यु प्रमाण-पत्र भी जारी हो चुका था और उसका पता फिंगर प्रिंट रिकार्ड से टेली करने पर जिसमें Discrepency की बात पुलिस के सामने आई सत्य की तह तक दो जोड़ी फिंगर प्रिंट के मिलान द्वारा संभव हुआ।

चित्रों के माध्यम से कई मूक दस्तावेजों की पहेली को सुलझाना संभव हो पाया है। शर्त है कि कुशल फोटोग्राफर, कुशल विशेषज्ञ, अपने–अपने ज्ञान का ठीक-ठीक प्रयोग करके सत्य को कोर्ट में उजागर कर सकता है। अतएव आवश्यक है कि फोटो एंलार्जमेंट, अंगुलछाप और विवादित अभिलेखों का मिलान करने के लिए आख्या के साथ फोटोएंलार्जमेंट्स को तैयार करना और उसे आख्या के साथ संलग्न करना आवश्यक और अनिवार्य है।

विश्व पुलिस की भूमिका इंटरपोल क्या है

कैलाशनाथ गुप्त
रिटायर्ड सुपिरिंटेंडेंट आफ पुलिस, सीबीआई
डी-1ए/115, जनकपुरी, नई दिल्ली-110058

कुछ समय पहले कुख्यात अपराधी दाऊद इब्राहीम के निकट सहयोगी बबलू श्रीवास्तव को सिंगापुर में इंटरपोल की मदद से गिरफ्तार किया गया था। यह गिरफ्तारी केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो के अनुरोध पर हुई। बबलू की गिरफ्तारी पर 2 लाख रुपए का इनाम घोषित था। भारत में उसके विरुद्ध 40 से अधिक संगीन अपराध दर्ज हैं। बबलू को दुबई से सिंगापुर पहुंचने पर इंटरपोल की मदद से गिरफ्तार किया गया और औपचारिक रूप से भारत को सौंपा गया। अब उसके विरुद्ध कानूनी कार्रवाई चल रही है।

बबलू श्रीवास्तव की गिरफ्तारी से पहले सिंगापुर के अनिवासी भारतीय व्यापारी व 'बिस्किट किंग' के नाम से चर्चित उद्योगपति राजन पिल्लै को इंटरपोल के अनुरोध पर भारत में केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने एक होटल से गिरफ्तार किया था। बाद में उसे जेल भेज दिया गया। उस के विरुद्ध सिंगापुर की एक अदालत में जालसाजी और धोखाधड़ी के कई मामलों में 14 वर्ष के कठोर कारावास की सजा सुनाई जा चुकी थी। वह सिंगापुर से फरार होकर भारत आया था।

जून, 1989 में केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने बंबई में 6 हज यात्रियों को चरस ले जाने के अभियोग में गिरफ्तार किया था तथा इंटरपोल नई दिल्ली द्वारा अलरियाद को सही समय पर सूचना भेजने के फलस्वरूप 4 आदमी वहां गिरफ्तार किए गए और उनके पास से 30 किलोग्राम हशीश तथा 13 किलोग्राम अफीम बरामद की गई।

जुलाई 1987 में नाइजीरिया के 5 लोगों को इंटरपोल नई दिल्ली की सूचना पर 1-1/2 किलोग्राम हेरोइन के साथ टोकियों में पकड़ा गया।

अप्रैल 1990 में इंटरपोल की सहायता से एक भारतीय तस्कर को फ्रैंकफर्ट (जर्मनी) हवाई अड्डे पर 2 कि.ग्रा. हेरोइन के साथ गिरफ्तार किया गया। उससे मिली सूचना के अनुसार भारत में अन्य गिरफ्तारियां की गईं।

मई 1994 में इजराइल में इंटरपोल के माध्यम से सूचना भेजने पर 2.5 कि.ग्रा. हशीश बरामद की गई तथा नारकोटिक्स कंट्रोल ब्यूरो ने भारत में उसी आधार पर कुछ अन्य लोगों को गिरफ्तार किया जो तस्करी का माल बाहर भेजते थे।

फरवरी 1993 में स्विटजरलैंड के इंटरपोल के माध्यम से सूचना प्राप्त होने पर मुंबई में स्विटजरलैंड के एक निवासी को गिरफ्तार किया गया जिसे वहां के कोर्ट द्वारा तस्करी के मामले में सजा सुनाई जा चुकी थी।

इसी प्रकार इंटरपोल की सूचना पर जांबिया के एक निवासी को हेरोइन की तस्करी करते हुए नवंबर 1992 में मुंबई में गिरफ्तार किया गया।

ये सभी सही घटनाएं हैं जिनमें इंटरपोल की मदद से विभिन्न प्रकार के अपराधियों/तस्करों को विश्व के अनेक स्थानों पर गिरफ्तार किया गया। परंतु यह बहुचर्चित 'इंटरपोल' क्या है जिसके बारे में हम अक्सर अखबारों में पढ़ते रहते हैं।

इंटरपोल का पूरा नाम 'इंटरनेशनल क्रिमिनल पुलिस आर्गेनाइजेशन' (अंतर्राष्ट्रीय) आपराधिक पुलिस संगठन है, जो एक विशाल अंतर्राष्ट्रीय संस्था है जिसके 17 देश सदस्य हैं। इस संस्था का मुख्यालय लियांस में है।

यह वह संगठन है जो विभिन्न प्रकार के अपराधियों, तस्करों तथा जासूसी करनेवाले लोगों के पीछे लगा रहता है और उन्हें गिरफ्तार कराकर उचित दंड दिलाने में मदद करता है कि किसी देश के कानून को तोड़कर कोई भी अपराधी दूसरे देश में भाग जाने पर भी बच नहीं सकता, क्योंकि कानून के हाथ बहुत लंबे हैं। इस हेतु सभी सदस्य

देश एक-दूसरे से सहयोग करते हैं और प्राप्त सूचनाओं पर तत्काल अमल करते हैं।

सर्वप्रथम 1914 में प्रथम अंतर्राष्ट्रीय पुलिस कांग्रेस का सम्मेलन मोनाको में हुआ जिसमें कुल 14 देशों के पुलिस अधिकारियों और वकीलों ने भाग लिया। उन्होंने एक अंतर्राष्ट्रीय आपराधिक रिकार्ड कार्यालय की स्थापना पर चर्चा की ताकि दूसरे देश के भागे हुए अपराधियों का पता लगाया जा सके।

इसके पश्चात् 1923 में द्वितीय अंतर्राष्ट्रीय पुलिस कांग्रेस का वियना में सम्मेलन हुआ। तब एक अंतर्राष्ट्रीय आपराधिक पुलिस कमीशन की स्थापना हुई जिसका मुख्यालय वियना में रखा गया। 1955 में पुलिस आयोग के संविधान में परिवर्तन किया गया तो इसे विश्वव्यापी संगठन का रूप प्रदान किया गया। आगे चलकर यही संस्था इंटरपोल के नाम से जानी जाने लगी।

1966 में इंटरपोल का मुख्यालय वियना से पेरिस आ गया और 1967 तक देश इसके सदस्य हो गए। 1989 में इंटरपोल का मुख्यालय पेरिस से लियांस (फ्रांस) आ गया, जहां यह इस समय कार्यरत है।

इंटरपोल की एक जनरल एसेंबली है जिस में सभी सदस्य देशों के प्रतिनिधि होते हैं। इस महासभा का अधिवेशन वर्ष में एक बार अवश्य होता है। जनरल एसेंबली एक कार्यकारिणी समिति चुनती है जिसमें 13 सदस्य होते हैं। संस्था के प्रधान को 4 साल के लिए चुना जाता है। कार्यकारिणी समिति की बैठक वर्ष में 2 बार होती है जिसमें महत्वपूर्ण निर्णय लिए जाते हैं।

जनरल सेक्रेटेरिएट एक स्थायी प्रशासकीय एवं तकनीकी संस्था है जिसके माध्यम से यह संगठन कार्य करता है। जो भी निर्णय जनरल एसेंबली तथा कार्यकारिणी समिति में लिए जाते हैं। उन पर कार्रवाई इस सचिवालय द्वारा की जाती है अपराध एवं अपराधियों के विषय में सूचनाएं इकट्ठी करना और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अधिकारियों से निरंतर संपर्क बनाए रखना भी इस सचिवालय काम है।

नेशनल सेंट्रल ब्यूरो

विश्व के विभिन्न सदस्य देशों में इंटरपोल की शाखाएं हैं, उनके कार्य का संचालन नेशनल सेंट्रल ब्यूरो यानी राष्ट्रीय केंद्रीय ब्यूरो के माध्यम से होता है। ये ब्यूरो विभिन्न देशों में स्थित इंटरपोल के हाथों के समान है। राष्ट्रीय ब्यूरो द्वारा विश्व के विभिन्न देशों से जब सहायता मांगी जाती है तो उस पर तुरंत कार्रवाई की जाती है। ये ब्यूरो अपनी पुलिस के साथ तो तालमेल रखते ही हैं, साथ ही साथ विश्व के अन्य देशों के ब्यूरो के साथ भी तालमेल रखते हैं।

इंटरपोल का अर्थिक पहलू

विश्व के विभिन्न सदस्य देश इंटरपोल को वार्षिक अनुदान देते हैं। जब कोई देश इंटरपोल का सदस्य बनता है तो उसका वार्षिक अनुदान निश्चित कर दिया जाता है। विश्व के सभी देश कुल 12 वर्गों में बांटे गए हैं जो अपनी आर्थिक स्थिति के अनुसार निर्धारित अनुदान इंटरपोल को प्रतिवर्ष भेजते हैं। इस वर्गीकरण में भारत का स्थान छठे वर्ग में है। वर्तमान में भारत द्वारा वार्षिक अनुदान में 3,46,000 स्विस फ्रांक दिए जाते हैं जो भारत के 63,10,898 रुपए के बराबर बैठते हैं। इससे अधिक अनुदान विश्व के अन्य 15 देश ही दे रहे हैं जिनमें अमेरिका, ब्रिटेन, फ्रांस, जापान, चीन आदि शामिल हैं।

राष्ट्रीय केंद्रीय ब्यूरो भारत

नई दिल्ली स्थित इंटरपोल का यह कार्यालय केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो के तहत काम करता है। केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो के निदेशक इसका प्रमुख होने के जनरल एसेंबली में भारत का प्रतिनिधित्व करता है। इंटरपोल का नई दिल्ली में कार्यालय लोदी रोड में कार्यरत है।

इंटरपोल (नई दिल्ली) खुद एक अन्वेषण यूनिट नहीं है। वह तो जो भी सूचनाएं विभिन्न देशों द्वारा मांगी जाती हैं, उन्हें देश के विभिन्न राज्यों से मंगाकर उन्हें भेजता है। इसके लिए यह आवश्यक है कि इंटरपोल नई

दिल्ली का विभिन्न राज्य पुलिस संस्थाओं से सीधा संपर्क रहे। इस हेतु विभिन्न राज्य पुलिस एजेंसियों में समन्वय अधिकारी नियुक्त किए गए हैं।

मादक पदार्थों के विरुद्ध अभियान

इंटरपोल ही एक ऐसी संस्था है जिसने अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मादक पदार्थों के अवैध व्यापार (ड्रग ट्रैफिकिंग) के विरुद्ध अभियान छेड़ने की आवश्यकता महसूस की है। इंटरपोल मुख्यालय में अलग से एक पूरा विभाग है जो नारकोटिक्स तस्करी से संबंधित कार्य देखता है। इस विभाग में एक डेटा बैंक भी है जिसमें इस विषय से संबंधित विभिन्न सूचनाएं इकट्ठी की जाती है।

एक देश द्वारा अपने भगोड़े अपरधी या अभियुक्त को दूसरे देश से, जहां वह छिपा है या जहां उसने शरण ले रखी है, वापस लाना प्रत्यर्पण कहलाता है। इंटरपोल देशों द्वारा अधिकतर यह भूमिका अदा की जाती है कि जो भी विदेशी अपराधी उनके देश में भागकर पहुंच जाते है, इंटरपोल की प्रार्थना पर उन को वहां अस्थायी तौर पर गिरफ्तार कर लिया जाता है और बाद में उस देश को सौंप दिया जाता है जहां से वह अपराध करके भागा था। उस देश के पुलिस अधिकारी दूसरे देश में जाकर अपने अपराधियों को अपने देश ले आते है जहां उन पर उस देश के कानून के अनुसार मुकदमा चलाया जाता है।

कंप्यूटर नेटवर्क एवं सूचियां

अपराधियों की खोज के लिए इंटरपोल के मुख्यालय लियांस (फ्रांस) में एक विशाल कंप्यूटर लगा हुआ है जिसमें सभी अंतर्राष्ट्रीय अपराधियों के बारे में जानकारी रखी जाती है और आवश्यकता पड़ने पर वहां से वांछित जानकारी कुछ ही समय में प्राप्त की जा सकती हैं। इंटरपोल का प्रशासनिक विभाग एक रेडियो ट्रांसमिशन सेट द्वारा सभी सदस्य देशों से संपर्क बनाए रखता है। इस कार्य में सभी देश अपना पूरा-पूरा सहयोग देते हैं। प्राप्त सूचना के अनुसार मुख्यालय में रेडियो नेटवर्क, टेली नेटवर्क, टेलीफोन तथा डाक प्रणाली द्वारा प्रतिवर्ष 4 लाख से अधिक संदेश प्राप्त होते है। आधुनिक वैज्ञानिक तथा तकनीकी उपकरण उपलब्ध होने के कारण इंटरपोल जिस तत्परता से अंतर्राष्ट्रीय अपराधियों को पकड़ कर संबंधित देशों की पुलिस को सौंपता है और जिस कुशलता से वह अपने अन्य कार्य संचालित कर रहा है वह काफी प्रशंसनीय हैं। वास्तव में इंटरपोल अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अपराधों को रोकने की दिशा में बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य कर रहा है।

साइबर अपराध : कानून और पुलिस

डा. इंद्रेश कुमार मिश्र
एसोसिएट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष
पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग
प्रताप विश्वविद्यालय, जयपुर (राजस्थान)

इंटरनेट ने अगर हमारी जिंदगी आसान की है तो दूसरी तरफ कई मुश्किलें भी पैदा की हैं। चंद सैकंडों का क्लिक हमें अनगिनत सूचनाओं को आसानी से मुहैया कराता है। इंटरनेट के तेजी से हो रहे प्रसार के साथ ही साइबर अपराध के आंकड़े आसमान छू रहे हैं। बैंकिंग, इंफार्मेशन और शेयर मार्केट को प्रभावित करने के बाद साइबर अपराधी इन दिनों युवाओं में मशहूर हो रही ऑनलाइन डेटिंग ऐप्स में सक्रिय हो रहे हैं। साइबर क्राइम ब्रांच के मुताबिक पिछले कुछ वर्षों में इन अपराधों में जमकर बढ़ोत्तरी हुई है और निशाने पर अक्सर युवा रहते हैं। जबसे इंटरनेट का जन्म हुआ तब से यह मुश्किल नासूर की शक्ल अख्तियार कर चुका है। साइबर अपराधों से लगभग पूरी दुनिया परेशान है और इसके बचाव के तरीके भी खोजे जा रहे हैं, लेकिन इन अपराधों पर अंकुश लगने की बजाए यह तेजी से बढ़ते चले जा रहे है। हम विश्लेषण करेंगे कि साइबर क्राइम क्या है, इसका खतरा कैसे बढ़ रहा है, इसकी रोकथाम के उपाय क्या है और साइबर कानून क्राइम से निबटने में कितनी मदद कर सकता है।

देश में वर्ष 2011 में कुल 13,301, वर्ष 2012 में 22,060, वर्ष 2013 में 71,780 साइबर अपराध दर्ज किए गए। साल 2014 में साइबर क्राइम की करीब डेढ़ लाख वारदातें होने की बात अध्ययन में सामने आई है जिनके 2015-16 में बढ़कर लगभग दो से तीन गुना हो जाने का अनुमान जताया गया है। यह बात भी सामने आई कि इन्हें अंजाम देने वाले अधिकतर अभियुक्त युवा हैं जिनकी आयु 18 से 30 साल के बीच है। वर्तमान में आनलाइन वित्तीय लेन-देन का 48 से 60 प्रतिशत हिस्सा मोबाइल के माध्यम से किया जा रहा है। बढ़ती आनलाइन बैंकिंग सेवाओं के मद्देनजर 2015 के अंत तक 55 से 60 प्रतिशत होने का अनुमान है। साइबर अपराधों के मामले में दुनियाभर के देशों में अमेरिका और जापान के बाद भारत तीसरे स्थान पर है। हालांकि दुनिया में दूसरे देशों के मुकाबले भारत में साइबर अपराध भले ही कम है पर इनके बढ़ते आंकड़े नए सिरे से सोचने और ठोस पहल करने को विवश करते हैं। साइबर अपराधों से महिलाएं भी अछूती नहीं है। संयुक्त राष्ट्र संघ की एक नई रिपोर्ट की मानें तो भारत में केवल 35 फीसदी महिलाओं ने ही अपने खिलाफ हुए साइबर अपराध की शिकायत की, जबकि साइबर अपराध से पीड़ित 46.7 प्रतिशत महिलाओं ने किसी तरह की कोई शिकायत नहीं की। इस सर्वे में जिन अन्य देशों को शामिल किया गया है उनमें से भारत के साथ कुछ नाम हैं–पाकिस्तान, पेरू, नाइजीरिया, इंडोनेशिया और केन्या।

इस रिपोर्ट के मुताबिक वैश्विक स्तर पर 18 से 24 साल की महिलाएं और लड़कियां खासतौर पर अपराध का निशाना बनती हैं। रिपोर्ट के मुताबिक दुनिया भर में इंटरनेट इस्तेमाल करने वाले देशों की 5 में 1 महिला औसतन ऐसी है जिसके खिलाफ अगर साइबर अपराध होता है तो दोषी को सजा मिलने की संभावना बेहद क्षीण होती है। रिपोर्ट में साइबर अपराध रोकने के लिए कई तरह के सुझाव भी दिए गए हैं। 86 देशों में किए गए अध्ययन में यह भी खुलासा हुआ कि साइबर अपराध कानून लागू करने की जिम्मेदार संस्थाएं ऐसे मामलों में से केवल 26 फीसद मामलों में ही पर्याप्त कदम उठाती हैं। सर्वे के अनुसार यही वजह है कि भारत में महिलाओं द्वारा उन्हें आनलाइन परेशान किए जाने संबंधी मामलों की बहुत कम ही शिकायत की जाती है।

अब यह जरूरी है कि साइबर अपराधों को रोकने के लिए वर्तमान कानून को कठोर किए जाने की जरूरत है। विदेशों में भी साइबर अपराध होते हैं लेकिन वहां के कानून अपने देश के मुकाबले सख्त होते हैं। ऐसा करना इसलिए भी जरूरी है, क्योंकि अब बैंक से लेकर तमाम चीजें आनलाइन होती चली जा रही हैं। ऐसे में संभावित खतरों को भांपकर कठोर पहल किए जाने की जरूरत है, क्योंकि आनलाइन का दायरा जिस कदर बढ़ा है उसी तरीके से धोखाधड़ी और साइबर अपराधों में भी बेतहाशा इजाफा हुआ है। इसलिए यह जरूरी है कि समय रहते इन अपराधों पर अंकुश लगाने के लिए नए सिरे से ठोस पहल की जाए।

एसोचैम व एसएसजी के एक अध्ययन में यह निष्कर्ष निकाला गया है कि देश में साइबर अपराध तेजी से बढ़ रहे हैं और इस साल के आखिर तक इनकी संख्या दोगुनी होकर तीन लाख हो सकती है। एक अध्ययन में यह अनुमान लगाया गया है। इसमें आगाह किया गया है कि बढ़ते साइबर अपराधों से वित्तीय क्षेत्र के साथ-साथ सुरक्षा संस्थानों और सामाजिक ताने-बाने पर बोझ बढ़ सकता है। इस अध्ययन के अनुसार देश में 2011 में कुल 13,301, वर्ष 2012 में 22,060, वर्ष 2013 में 71,780, और 2014 में 1,49,254 साइबर अपराध दर्ज किए गए। एसोचैम के अनुसार, 'सबसे बड़ी चिंता की बात यह है कि इन अपराधों का मूल स्थान चीन, पाकिस्तान, बांग्लादेश व अल्जीरिया सहित विदेश स्थित अन्य जगहों से है।' अध्ययन के अनुसार आनलाइन बैंकिंग खातों पर फिशिंग हमले या एटीएम डेबिट कार्ड की क्लोनिंग आम साइबर अपराध है। इसके अलावा आनलाइन बैंकिंग, वित्तीय लेनदेन के लिए मोबाइल, स्मार्टफोन, टेबलेट के बढ़ते इस्तेमाल के कारण भी साइबर अपराधों की आशंका बढ़ी है। रपट के अनुसार साइबर अपराधों में शामिल लोगों में सबसे अधिक 18-30 वर्ष आयु के हैं।

इसके अनुसार ई-गवर्नेंस, आनलाइन कारोबार व इलेक्ट्रानिक लेनदेन आदि सूचना प्रौद्योगिकी सम्बद्ध सेवाओं के बढ़ते इस्तेमाल के बीच व्यक्तिगत तथा संवेदनशील डेटा का संरक्षण बहुत महत्वपूर्ण हो गया है। एक विशेषज्ञ ने कहा कि, किसी भी देश की आर्थिक वृद्धि तथा आंतरिक व बाह्य सुरक्षा तथा प्रतिस्पर्धी क्षमता इस बात पर निर्भर करती है कि उसका साइबर स्पेस कितना सुरक्षित व अभेद है।

साइबर क्राइम कहते किसे हैं—इंटरनेट के जरिए किए जाने वाले अपराधों को साइबर क्राइम कहते हैं। जैसे ईमेल तथा फेसबुक हैक करना, फोन या किसी अन्य तरीकों से बैंक अकाउंट नंबर की जानकारी लेकर उससे पैसा निकालना, एटीएम या सीवीवी कोड जानना इत्यादि, जहां एक ओर इंटरनेट वरदान साबित हुआ है, वहीं दूसरी और इसे अभिशाप बनने में भी देर नहीं लगी। जहां पहले सिर्फ हैकिंग और वायरस का ही डर था, वहीं अब इसका बाजार बढ़ता जा रहा है। मार्फिंग, पोर्नोग्राफी, पीडोफाइल भी इसमें शामिल हो गया है। आंकड़ों के अनुसार, स्पैम हैकिंग और धोखाधड़ी के सूचित मामलों की संख्या 2004 से 2007 में 50 गुना बढ़ी है। कंप्यूटर वायरस के जरिए भी साइबर क्राइम होता है। पूरी दुनिया में लगभग 100 लोग ही हैं जो पूरे विश्व के साइबर अपराधों के लिए जिम्मेदार हैं, यह कहना है यूरोपीय संघ के यूरोपोल्स साइबरक्राइम सेंटर के प्रमुख ट्रोएल्स ओएटिंग का। यह बात उन्होंने बीबीसी के टेक टेंट रेडियो कार्यक्रम के दौरान कही। उनका मानना है कि जांच अधिकारी अगर बेहतरीन प्रोग्रामरों के एक छोटे से समूह पर ध्यान दें तो बेहतर होगा। उन्होंने बीबीसी से कहा हम बमुश्किल ही उन्हें जानते हैं। अगर हम इन लोगों को बाहर कर देते हैं तो बाकी अपने आप ढह जाएंगे। उनका मानना है कि अब भी साइबर अपराधों से जूझना कठिन काम है और ऐसे लोगों की संख्या बढ़ने ही वाली है।

लालच और मुनाफा—ओएर्टिंग कहते हैं, 'हम अभी उनका सामना कर सकते हैं लेकिन अपराधियों के

पास ज्यादा संसाधन हैं। उनके सामने कोई मुश्किल भी नहीं है। वे लालच और मुनाफे के लिए काम कर रहे हैं।' 'हम जितनी रफ्तार से उन्हें पकड़ रहे हैं वे उससे ज्यादा तेजी से मालवेयर (कंप्यूटर वायरस) बना रहे हैं।' साइबर अपराध का सामना करने में सबसे बड़ी मुश्किल ऐसे अपराधियों का किसी देश और सीमा के परे होना है।

ऑनलाइन बिक्री–ट्रोएल्स ओएर्टिंग हाल ही में रूस की राजधानी मास्को में साइबर अपराधों पर चर्चा करने के लिए गए थे। उन्हें उम्मीद है कि अपराधियों को गिरफ्तार किया जाएगा और उन्हें सजा मिलेगी। ओएर्टिंग बताते हैं कि साइबर अपराधी मालवेयर को आनलाइन फोरम में बेच रहे हैं। आम लोगों को इन अपराधियों से किस तरह का खतरा हो सकता है, इस पर ओएर्टिंग कहते हैं, 'आपकी निजी और संवेदनशील जानकारियों की सुरक्षा के बारे में आपको सोचना चाहिए। आपके बारे में थोड़ी-सी जानकारी पाकर वे आपके गूगल, फेसबुक या आई फोन अकाउंट में बदलाव कर सकते हैं।' उनका मानना है कि इंटरनेट प्रयोग करने वालों की बढ़ती संख्या ने उनके काम को थोड़ा और मुश्किल बना दिया है।

भारत में साइबर अपराध की रोकथाम हेतु कानून-सूचना प्रोद्योगिकी अधिनियम में साइबर अपराध के लिए दो तरह के उपाए दिए गए हैं।

पहला दीवानी उपाय (Civil relief)–इसमें जो भी व्यक्ति आपको नुकसान पहुंचाता है उससे आप हर्जाना प्राप्त कर सकते हैं, लेकिन यह मुकदमे सिविल न्यायालयों में नहीं चलते। इन मुकदमें को तय करने के लिए एक अलग से अधिकारी (Adjudicating Officer) नियुक्त किया जाता है। इस समय प्रत्येक राज्य में उनके इंफॉरमेशन तकनीक के सचिव ही यह अधिकारी है। इनके फैसले की अपील साइबर ट्रिव्यूनल में होती है। उसके बाद इनकी अपील हाई कोर्ट में दाखिल की जा सकती है।

दूसरा फौजदारी अभियोग (Criminal Prosecution)–इसमें साइबर कानून के उल्लघंन करने वालों को सजा हो सकती है। इसके लिए पुलिस ने प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज करानी पड़ती है और मुकदमा फौजदारी अदालत में ही चलता है। 17 अक्टूबर, 2000 को इंफार्मेशन टेक्नोलाजी एक्ट, 2000 (सूचना तकनीक कानून, 2000) अस्तित्व में आया। 27 अक्टूबर 2009 को एक घोषणा द्वारा इसे संशोधित किया गया। संशोधित कानून में परिभाषाएं निम्नवत हैं-

सूचना तकनीक कानून, 2000 की प्रस्तावना में ही हर ऐसे लेनदेन को कानूनी मान्यता देने की बात उल्लिखित है, जो इलेक्ट्रानिक कामर्स के दायरे में आता है और जिसमें सूचनाओं के आदान-प्रदान के लिए सूचना तकनीक का इस्तेमाल हुआ हो।

(ए) यहां कानून से तात्पर्य सूचना तकनीक कानून, 2000 से है।

(बी) संवाद (कम्युनिकेशन) का मतलब किसी भी तरह की जानकारी या संकेत के प्रचार, प्रसार या उसे एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाना है। यह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष, किसी भी तरह का हो सकता है।

(सी) संवाद सूत्र (कम्युनिकेशन लिंक) का अर्थ कंप्यूटरों को आपस में एक-दूसरे से जोड़ने के लिए प्रयुक्त होने वाले सैटेलाइट, माइक्रोवेव, रेडियो, जमीन के अंदर स्थित कोई माध्यम, तार, बेतार या संचार का कोई अन्य साधन हो सकता है।

सूचना तकनीक कानून 9 जनवरी, 2000 को पेश किया गया था। 30 जनवरी, 1997 को संयुक्त राष्ट्र की जनरल एसेंबली में प्रस्ताव संख्या 51/162 द्वारा सूचना तकनीक की आदर्श नियमावली (जिसे यूनाइटेड नेशंस कमीशन आफ इंटरनेशनल ट्रेड ला के नाम से जाना जाता है) पेश किए जाने के बाद सूचना तकनीक कानून, 2000 को पेश करना अनिवार्य हो गया था। संयुक्त राष्ट्र की नियमावली में संवाद के आदान-प्रदान के लिए सूचना तकनीक या कागज के

इस्तेमाल को एक समान महत्व दिया गया है और सभी देशों से इसे मानने की अपील की गई है। सूचना तकनीक कानून, 2000 की प्रस्तावना में ही हर ऐसे लेनदेन को कानूनी मान्यता देने की बात उल्लिखित है, जो इलेक्ट्रानिक कामर्स के दायरे में आता है और जिसमें सूचनाओं के आदान-प्रदान के लिए सूचना तकनीक का इस्तेमाल हुआ हो। इलेक्ट्रानिक कॉमर्स सूचना के आदान-प्रदान और उसके संग्रहण के लिए कागज आधारित माध्यमों के विकल्प के रूप में इलेक्ट्रानिक माध्यम का इस्तेमाल करता है। इससे सरकारी संस्थानों में भी इलेक्ट्रानिक माध्यम से दस्तावेजों का आदान-प्रदान संभव हो सकता है और इंडियन एविडेंस एक्ट 1872, बैंकर्स बुक्स एविडेंस एक्ट 1891 और रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया एक्ट 1934 अथवा इससे प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से जुड़े किसी भी कानून में संशोधन में भी इन दस्तावेजों का उपयोग हो सकता है। संयुक्त राष्ट्र की जनरल एसेंबली ने 30 जनवरी, 1997 को प्रस्ताव संख्या ए/आरइएस/51/162 के तहत यूनाइटेड नेशंस कमीशन ऑन इंटरनेशनल ट्रेड ला द्वारा अनुमोदित मॉडल लॉ ऑन इलेक्ट्रानिक कामर्स (इलेक्ट्रानिक कॉमर्स से संबंधित आदर्श कानून) को अपनी मान्यता दे दी। इस कानून में सभी देशों से यह अपेक्षा की जाती है कि सूचना के आदान-प्रदान और उसके संग्रहण के लिए कागज आधारित माध्यमों के विकल्प के रूप में इस्तेमाल की जा रही तकनीकों से संबंधित कोई भी कानून बनाने या उसे संशोधित करते समय वे इसके प्रावधानों का ध्यान रखेंगे, ताकि सभी देशों के कानूनों में एकरूपता बनी रहे।

सूचना तकनीक कानून 2000, 17 अक्टूबर, 2000 को अस्तित्व में आया। इसमें 13 अध्यायों में विभक्त कुल 94 धाराएं हैं। 27 अक्टूबर, 2009 को इस कानून को एक घोषणा द्वारा संशोधित किया गया। इसे 5 फरवरी, 2009 को फिर से संशोधित किया गया। जिसके तहत अध्याय 2 की धारा 3 में इलेक्ट्रानिक हस्ताक्षर की जगह डिजिटल हस्ताक्षर को जगह दी गई। इसके लिए धारा 2 में उपखंड (एच) के साथ उपखंड (एचए) को जोड़ा गया, जो सूचना के माध्यम की व्याख्या करता है। इसके अनुसार, सूचना के माध्यम से तात्पर्य मोबाइल फोन, किसी भी तरह का व्यक्तिगत डिजिटल माध्यम या फिर दोनों हो सकते हैं। जिनके माध्यम से किसी भी तरह की लिखित सामग्री, वीडियो, ऑडियो या तस्वीरों को प्रचारित, प्रसारित या एक से दूसरे स्थान तक भेजा जा सकता है। आधुनिक कानून की शब्दावली में साइबर कानून का संबंध कंप्यूटर और इंटरनेट से है। विस्तृत संदर्भ में कहा जाए तो यह कंप्यूटर आधारित सभी तकनीकों से संबद्ध है। साइबर आतंकवाद के मामलों में दंड विधान के लिए सूचना तकनीक कानून, 2000 में धारा 66–एफ को जगह दी गई है।

66–एफ : साइबर आतंकवाद के लिए दंड का प्रावधान

1. यदि कोई (ए) भारत की एकता, अखंडता, सुरक्षा या संप्रभुता को भंग करने या इसके निवासियों को आतंकित करने के लिए–

क. किसी अधिकृत व्यक्ति को कंप्यूटर के इस्तेमाल से रोकता है रोकने का कारण बनता है।

ख. बिना अधिकार के या अपने अधिकार का अतिक्रमण कर जबरन किसी कंप्यूटर के इस्तेमाल की कोशिश करता है।

ग. कंप्यूटर में वायरस जैसी कोई ऐसी चीज डालता है या डालने की कोशिश करता है जिससे लोगों की जान को खतरा पैदा होने की आशंका हो या संपत्ति के नुकसान का खतरा हो या जीवन के लिए आवश्यक सेवाओं में जानबूझ कर खलल डालने की कोशिश करता है या धारा 70 के तहत संवेदनशील जानकारियों पर बुरा असर पड़ने की आशंका हो या–

(बी) अनधिकार या अधिकारों का अतिक्रमण करते हुए जानबूझ कर किसी कंप्यूटर से ऐसी सूचनाएं हासिल करने में कामयाब होता है, जो देश की सुरक्षा या

अन्य देशों के साथ उसके संबंधों के नजरिए से संवेदनशील हैं या कोई भी गोपनीय सूचना इस इरादे के साथ हासिल करता है जिससे भारत की सुरक्षा, एकता, अखंडता एवं संप्रभुता, अन्य देशों के साथ इसके संबंध, सार्वजनिक जीवन या नैतिकता पर बुरा असर पड़ता हो या ऐसा होने की आशंका हो, देश की अदालतों की अवमानना अथवा मानहानि होती हो या ऐसा होने की आशंका हो, किसी अपराध को बढ़ावा मिलता हो या इसकी आशंका हो, किसी विदेशी राष्ट्र अथवा व्यक्तियों के समूह अथवा किसी अन्य को ऐसी सूचना से फायदा पहुंचता हो, तो उसे साइबर आतंकवाद का आरोपी माना जा सकता है।

2. यदि कोई व्यक्ति साइबर आतंकवाद फैलाता है या ऐसा करने की किसी साजिश में शामिल होता है तो उसे आजीवन कारावास की सजा सुनाई जा सकती है। 2005 में प्रकाशित एडवांस्ड ला लेक्सिकान के तीसरे संस्करण में साइबरस्पेस शब्द को भी इसी तर्ज पर परिभाषित किया गया है। इसमें इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों से फ्लोटिंग शब्द पर खासा जोर दिया गया है, क्योंकि दुनिया के किसी भी हिस्से से इस तक पहुंच बनाई जा सकती है। लेखक ने आगे इसमें साइबर थेफ्ट (साइबर चोरी) शब्द को आनलाइन कंप्यूटर सेवाओं के इस्तेमाल के परिप्रेक्ष्य में परिभाषित किया है। इस शब्दकोष में साइबर कानून की इस तरह व्याख्या की है, कानून का वह क्षेत्र, जो कंप्यूटर और इंटरनेट से संबंधित है और उसके दायरे में इंटेलेक्चुअल प्रापर्टी राइट्स, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और सूचनाओं तक निर्बाध पहुंच आदि आते हैं।

सूचना तकनीक कानून में कुछ और चीजों को परिभाषित किया गया है, जो इस प्रकार हैं–कंप्यूटर से तात्पर्य किसी भी ऐसे इलेक्ट्रानिक, मैग्नेटिक, आप्टिकल या तेज गति से डाटा का आदान-प्रदान करने वाले किसी भी ऐसे यंत्र से है, जो विभिन्न तकनीकों की मदद से गणितीय, तार्किक या संग्रहणीय कार्य करने में सक्षम है। इसमें किसी कंप्यूटर तंत्र से जुड़ा या संबंधित हर प्रोग्राम और साफ्टवेयर शामिल है। सूचना तकनीक कानून, 2000 की धारा 1 (2) के अनुसार, उल्लिखित अपवादों को छोड़कर इस कानून के प्रावधान पूरे देश में प्रभावी हैं। साथ ही उपरोक्त उल्लिखित प्रावधानों के अंतर्गत देश की सीमा से बाहर किए गए किसी अपराध की हालत में भी उक्त प्रावधान प्रभावी होंगे।

सूचना तकनीक कानून, 2000 के अंतर्गत साइबर स्पेस में क्षेत्राधिकारी संबंधी प्रावधान–मानव समाज के विकास के नजरिए से सूचना और संचार तकनीकों की खोज को बीसवीं शताब्दी का सबसे महत्वपूर्ण अविष्कार माना जा सकता है। सामाजिक विकास के विभिन्न क्षेत्रों, खासकर न्यायिक प्रक्रिया में इसके इस्तेमाल की महत्ता को कम करके नहीं आंका जा सकता, क्योंकि इसकी तेज गति, कई छोटी–मोटी दिक्कतों से छुटकारा, मानवीय गलतियों की कमी, कम खर्चीला होना जैसे गुणों के चलते यह न्यायिक प्रक्रिया को विश्वसनीय बनाने में अहम भूमिका निभा सकती है। इतना ही नहीं, ऐसे मामलों के निष्पादन में, जहां सभी संबद्ध पक्षों की शारीरिक उपस्थिति अनिवार्य न हो, यह सर्वश्रेष्ठ विकल्प सिद्ध हो सकता है। सूचना तकनीक कानून के अंतर्गत उल्लिखित आरोपों की सूची निम्नवत है:–

1. कंप्यूटर संसाधनों से छेड़छाड़ की कोशिश–धारा 65

2. कंप्यूटर में संग्रहित डाटा के साथ छेड़छाड़ कर उसे हैक करने की कोशिश–धारा 66

3. संवाद सेवाओं के माध्यम से प्रतिबंधित सूचनाएं भेजने के लिए दंड का प्रावधान–धारा 66 ए

4. कंप्यूटर या अन्य किसी इलेक्ट्रानिक गैजेट से चोरी की गई सूचनाओं को गलत तरीके से हासिल करने के लिए दंड का प्रावधान–धारा 66 बी

5. किसी की पहचान चोरी करने के लिए दंड का प्रावधान–धारा 66 सी

6. अपनी पहचान छुपाकर कंप्यूटर की मदद से किसी के व्यक्तिगत डाटा तक पहुंच बनाने के लिए दंड का प्रावधान–धारा 66 डी

7. किसी की निजता भंग करने के लिए दंड का प्रावधान–धारा 66 इ

8. साइबर आतंकवाद के लिए दंड का प्रावधान-धारा 66 एफ

9. आपत्तिजनक सूचनाओं के प्रकाशन से जुड़े प्रावधान–धारा 67

10. इलेक्ट्रानिक माध्यमों से सेक्स या अश्लील सूचनाओं को प्रकाशित या प्रसारित करने के लिए दंड का प्रावधान–धारा 67 ए

11. इलेक्ट्रानिक माध्यमों से ऐसी आपत्तिजनक सामग्री का प्रकाशन या प्रसारण जिसमें बच्चों को अश्लील अवस्था में दिखाया गया हो–धारा 67 बी

12. मध्यस्थों द्वारा सूचनाओं को बाधित करने या रोकने के लिए दंड का प्रावधान–धारा 67 सी

13. सुरक्षित कंप्यूटर तक अनधिकार पहुंच बनाने से संबंधित प्रावधान–धारा 70

14. डाटा या आंकड़ों को गलत तरीके से पेश करना–धारा–71

15. आपसी विश्वास और निजता को भंग करने से संबंधित प्रावधान–धारा 72 ए

16. कान्टैक्ट की शर्तों का उल्लंघन कर सूचनाओं को सार्वजनिक करने से संबंधित प्रावधान–धारा 72 ए

17. फर्जी डिजिटल हस्ताक्षर का प्रकाशन–धारा 73

सूचना तकनीक कानून की धारा 78 में इंस्पेक्टर स्तर के पुलिस अधिकारी को इन मामलों में जांच का अधिकार हासिल है। इंडियन पेनल कोर्ड (आईपीसी) में साइबर अपराधों से संबंधित प्रावधान–

1. ईमेल के माध्यम से धमकी भरे संदेश भेजना-आईपीसी की धारा 503

2. ईमेल के माध्यम से ऐसे संदेश भेजना जिससे मानहानि होती हो–आईपीसी की धारा 499

3. फर्जी इलेक्ट्रानिक रिकार्ड्स का इस्तेमाल–आईपीसी की धारा 463

4. फर्जी वेबसाइट्स या साइबर फ्राड–आईपीसी की धारा 420

5. चोरी–छिपे किसी के ईमेल पर नजर रखना–आईपीसी की धारा 463

6. वेब हैकिंग–आईपीसी की धारा 383

7. ईमेल का गलत इस्तेमाल–आईपीसी की धारा 500

8. दवाओं को आनलाइन बेचना–एनडीपीएस एक्ट

9. हथियारों की आनलाइन खरीद–बिक्री–आर्म्स एक्ट

साइबर अपराधों पर अंकुश के लिए पीपीपी परियोजनाओं के पक्ष में हैं विशेषज्ञ–साइबर अपराधों के बढ़ते मामलों के मद्देनजर उद्योग विशेषज्ञों का मानना है कि आंकड़ों की चोरी रोकने के लिए सार्वजनिक निजी भागीदारी (पीपीपी) परियोजनाओं को आगे बढ़ाया जाना चाहिए। सिक्योरिटी सेवाओं से जुड़ी कंपनी के कार्यकारी निदेशक ने कहा, 'डेटा सुरक्षा के महत्व को नकारा नहीं जा सकता। चाहे यह सरकारी क्षेत्र में हो या निजी क्षेत्र में। बड़ी कंपनियों में आंकड़ों की चोरी रोकने के उपाय हैं, लेकिन मझोली व छोटी कंपनियों में ऐसी सुविधाओं का अभाव है।' उन्होंने कहा कि इसके अलावा सरकारी विभागों को डेटा सुरक्षा तंत्र को मजबूत करने की जरूरत है। इसका एक बेहतर तरीका यह हो सकता है कि साइबर अपराधों पर अंकुश के प्रयासों में निजी क्षेत्र को भी शामिल किया जाए। एक अन्य साइबर सुरक्षा विशेषज्ञ ने नई प्रौद्योगिकी के इस्तेमाल की वकालत करते हुए डेटा लीकेज और चोरी के बारे में जागरुकता बढ़ाने पर जोर दिया। उन्होंने कहा, 'निजी क्षेत्र में डेटा लीकेज के मामले आते हैं। सरकारी

वेबसाइटों को भी हैक किए जाने के प्रयास हुए हैं। बहुत से लोग इन अपराधों की सूचना नहीं देते। इन पर अंकुश का एक बेहतरीन तरीका प्रणाली को सुरक्षित बनाना है।' नेशनल क्राइम रिकॉर्ड्स ब्यूरो (एनसीआरबी) के आंकड़ों के अनुसार, सूचना प्रौद्योगिकी (आईटी) कानून के तहत दायर मामलों में इजाफा हुआ है। पिछले साल इसके तहत कुल 4,356 मामले दायर किए गए। वर्ष 2012 में यह आंकड़ा 2,876 का था।

इंटरनेट सुरक्षा पर नए विश्वव्यापी प्रस्ताव– कंप्यूटर नेटवर्क कंप्यूटर के संचालक को हमले का पता ही नहीं चलता माइक्रोसाफ्ट के एक वरिष्ठ शोधकर्ता ने सुझाव दिया है कि ऐसी वेबसाइटों को प्रतिबंधित कर देना चाहिए जिसमें वायरस हो। शोधकर्ता का कहना है कि उन्होंने विभिन्न बीमारियों से होने वाली महामारी से यह सबक सीखा है। इसके जरिए उन साइबर अपराधियों को रोका जा सकेगा जो अक्सर वेबसाइट के संचालकों की जानकारी के बगैर उन पर कब्जा कर लेते हैं और उसका कई तरह से दुरुपयोग करते हैं, खासकर स्पैम ईमेल यानी सामूहिक ईमेल भेजने के लिए करते हैं। इस प्रस्ताव का मतलब यह है कि हर बार जब कंप्यूटर को चालू किया जाएगा तो हर बार कंप्यूटर इस बात की जांच करेगा कि कहीं उसमें ऐसी कोई छेड़छाड़ तो नहीं की गई है। हालांकि अभी यह स्पष्ट नहीं है कि इस व्यवस्था को लागू करने और चलाने की जिम्मेदारी कौन निभाएगा।

घातक कंप्यूटर नेटवर्क– सामूहिक ईमेल और घातक साफ्टवेयर के जरिए साइबर हमले किए जाते हैं इसके जरिए उस समस्या से निपटने का प्रस्ताव किया गया है जिसे बाटनेट्स कहा जाता है। इसमें साइबर अपराधी कंप्यूटर नेटवर्क पर कब्जा कर लेते हैं। अक्सर कंप्यूटर चलाने वाले को यह पता ही नहीं होता कि उसकी मशीन पर किसी और ने कब्जा कर लिया है। ऐसा करने के लिए आमतौर पर ईमेल के जरिए भेजे जाने वाले साफ्टवेयर का उपयोग किया जाता है। ऐसे किसी साफ्टवेयर को डाउनलोड करने से भी ऐसी समस्या आती है जो वैधानिक साफ्टवेयर की तरह ही प्रतीत होता है।

विशेषज्ञों का दावा है कि इसका इलाज यह है कि एक ऐसी वैश्विक व्यवस्था लागू कर दी जाए जिससे कि कंप्यूटरों के स्वास्थ्य की आनलाइन ही जांच हो सके। उनका कहना है कि कंप्यूटर को जब भी इंटरनेट से जोड़ा जाए तो यह जांच करना आवश्यक कर दिया जाए कि उसमें सुरक्षा के पर्याप्त इंतजाम हैं और उसमें एंटी-वायरस साफ्टवेयर ठीक से काम कर रहा है। कंप्यूटर सुरक्षा विशेषज्ञों के जर्मनी में हुए सम्मेलन में यह प्रस्ताव रखा गया है और फिलहाल यह कागजों पर ही है।

लेखकों से निवेदन

यदि पुलिस विज्ञान में प्रकाशन के लिए आपके पास पुलिस, शांति-व्यवस्था, अपराध न्याय-व्यवस्था आदि पर कोई लेख है या आप लेख लिखने में सक्षम हैं तथा रुचि रखते हों तो अपने लेख यथा शीघ्र भेजें। अच्छे लेखों को प्रकाशित करने का हमारा पूरा प्रयास रहेगा। लेख टाइप किया होना चाहिए तथा इसके संबंध में फोटो, चार्ट आदि हों तो उन्हें भी साथ भेजना चाहिए। प्रकाशित होने वाले लेखों पर समुचित पारिश्रमिक की व्यवस्था है।

यदि आपने पुलिस विज्ञान से संबंधित किसी विषय पर उपयोगी पुस्तक लिखी है और आप पुलिस विज्ञान में उसे कड़ी के रूप में प्रकाशित करवाना चाहते हैं तो हमें पांडुलिपि भेजें।

यदि आप कर्मियों के कार्य को लेकर कहानी या अन्य किसी विधा में लिखने में रुचि रखते हों तो हम ऐसे साहित्य का भी स्वागत करेंगे।

यदि पुलिस विज्ञान से संबंधित किसी हिन्दीतर भाषा के उच्चस्तरीय लेख का अनुवाद किया हो और आपके पास अनुवाद प्रकाशन का कापीराइट हो अथवा उनके कापीराइट की आवश्यकता न हो तो ऐसे लेख/सामग्री भी प्रकाशनार्थ आमंत्रित हैं। प्रकाशित लेखों पर समुचित मानदेय देने की व्यवस्था है। लेख भेजते समय यह प्रमाणित करें कि लेख मौलिक/अनूदित व अप्रकाशित है तथा इस पर कोई मानदेय नहीं लिया गया है। अनूदित लेख के कापीराइट के संबंध में भी सूचित करें।

विषय आदि के बारे में विस्तृत जानकारी के लिए पुलिस विज्ञान की नमूने की प्रति मंगाने के लिए संपर्क करें :—

संपादक
पुलिस विज्ञान
पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो
ब्लाक-11, चौथी मंजिल
सी.जी.ओ. कम्पलैक्स, लोदी रोड
नई दिल्ली-110003
फोन : 24360371 एक्स. 115

वैब साइट — डब्लू.डब्लू.डब्लू. बीपीआरडी.एनआईसी.इन

पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो

गृह मंत्रालय

पं. गोविन्द वल्लभ पंत पुरस्कार योजना

पुलिस, कारागार एवं न्यायालयिक विज्ञान से संबंधित विषयों पर हिन्दी में पुस्तक लेखन के लिए रचनाएं आमंत्रित की जाती हैं। मूल प्रकाशित पुस्तकों पर 5 पुरस्कार 30,000/- रु. प्रति पुरस्कार (एक पुरस्कार महिलाओं के लिए आरक्षित है), दो पुरस्कार अनूदित मुद्रित पुस्तकों के लिए 14,000/- रु. प्रति पुरस्कार (एक पुरस्कार महिलाओं के लिए आरक्षित है)। योजना के भाग दो में 40,000/- रु. के दो पुरस्कार हैं। जिसके लिए निर्धारित विषयों पर रूपरेखाएं आमंत्रित की जाती हैं। जिसमें सामान्य वर्ग के लिए **दिए गए विषय पर आवेदक उस विषय पर लिखने वाली पुस्तक में क्या-क्या सामग्री व अध्यायों आदि का उल्लेख करते हुए 5-6 पृष्ठ की एक रूपरेखा को प्रस्तुत करना होगा** तथा महिलाओं के लिए आरक्षित विषय में भी उपरोक्त प्रक्रिया अपनाई जाएगी। रचनाएं/रूपरेखाएं भेजने की अंतिम तिथि सामान्यत: 30 सितंबर होती है। विस्तृत जानकारी के लिए कृपया संपादक (हिंदी), पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो (गृह मंत्रालय), ब्लाक सं. 11, 3/4 मंजिल, सी.जी.ओ. कंप्लैक्स, लोदी रोड, नई दिल्ली-110003 से संपर्क करें।

(दूरभाष : 011-24362418, 24360371 एक्स-253 तथा फैक्स : 011-24362425)

अपराध विज्ञान तथा पुलिस विज्ञान में डाक्टरेट कार्य हेतु अध्येतावृति योजना

पुलिस विज्ञान तथा अपराध विज्ञान में डाक्टरेट कार्य हेतु ब्यूरो द्वारा 6 अध्येतावृतियों के लिए भारतीय नागरिकों से आवेदन पत्र आमंत्रित किए जाते हैं। इस योजना के तहत विज्ञापन प्रति वर्ष माह में भारत के सभी प्रमुख समाचार पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित किया जाता है। इसके लिए अंतिम तिथि 30 जून होती है। इसमें अभ्यर्थी को पी.एच.डी. के लिए विश्वविद्यालय से पंजीकृत होना आवश्यक है। इसमें अभ्यर्थी को पहले 2 वर्ष 8000/- रु. तथा तीसरे वर्ष 9000/- रु. तथा इसके साथ फुटकर खर्च के लिए 10000/- रु. तथा जिस संस्था से वह पंजीकृत होगा उसे 3000/- रु. प्रदान किए जाएंगे। विस्तृत जानकारी के लिए अनुसंधान एकक, पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, ब्लाक सं. 11, 3/4 मंजिल, सीजीओ कंप्लैक्स, लोदी रोड, नई दिल्ली-110003 से संपर्क किया जा सकता है। पूर्ण जानकारी कार्यालय की वेब साइट www.bprd.gov.in में भी देखी जा सकती है। (संपर्क के लिए फोन नं. 01124360371243)

पुलिस एवं कारागार संबंधी विषयों पर अनुसंधान परियोजनाएं आमंत्रित

पु.अनु.वि. ब्यूरो (गृह मंत्रालय) **पुलिस एवं कारागार** से संबंधित विभिन्न विषयों पर अनुसंधान परियोजनाओं के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिए गैर सरकारी संगठनों, विश्वविद्यालयों व व्यक्तिगत शोधकर्ताओं को उनके संबंधित विश्वविद्यालयों के माध्यम से आवेदन आमंत्रित कर रहा है। आवेदन भेजने की अंतिम तिथि 30 सितंबर होती है। विस्तृत जानकारी के लिए उपनिदेशक (अनु.) एवं सहायक निदेशक (सी.सी.), ब्लाक सं. 11, 3/4 मंजिल, सीजीओ कंप्लैक्स, लोदी रोड, नई दिल्ली-110003 (फोन नं. 01124362418 एवं 01124263872) पर संपर्क कर सकते हैं। तथा ब्यूरो की www.bprd.gov.in वेब साइट से भी जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

पं. गोविन्द वल्लभ पंत पुरस्कार योजना के अंतर्गत ब्यूरो द्वारा प्रकाशित पुस्तकें

क्र. सं.	*पुस्तक का नाम*	*लेखक का नाम*	*मूल्य*
1.	**भारतीय पुलिस का इतिहास** (अतीतकाल से मुगलकाल तक)	डा. शैलेन्द्र चतुर्वेदी	54/-
2.	**भारत में केन्द्रीय पुलिस संगठन**	श्री एच. भीष्मपाल	65/-
3.	**ग्रामीण पुलिस : समस्याएं एवं समाधान**	श्री रामलाल विवेक	65/-
4.	**ग्रामीण पुलिस : समस्याएं एवं समाधान**	श्री शंकर सरौलिया	70/-
5.	**विकासशील समाज में समसामयिक पुलिस की भूमिका**	श्री आर.एस. श्रीवास्तव	105/-
6.	**स्वातंत्र्योत्तर भारत में पुलिस की भूमिका एवं जनता का दायित्व**	डा. कृष्णमोहन माथुर	210/-
7.	**मादक पदार्थ एवं पुलिस की भूमिका**	श्री हरीश नवल	—
8.	**सामाजिक चेतना के परिप्रेक्ष्य में पुलिस की भूमिका का उद्‌भव**	प्रो. मीनाक्षी स्वामी	—
9.	**समग्र न्याय-व्यवस्था में पुलिस का स्थान एवं भूमिका**	श्री ललितेश्वर	600/-
10.	**पुलिस दायित्व एवं नागरिक जागरूकता**	डा. सी. अशोकवर्धन	568/-
11.	**महिला और पुलिस**	श्रीमती अमिता जोशी	100/-
12.	**मानवाधिकार और पुलिस**	डा. जी.एस. वाजपेयी	346/-
13.	**नई आर्थिक नीति एवं अपराध**	डा. अर्चना त्रिपाठी	183/-
14.	**बाल अपराध**	डा. गिरिश्वर मिश्र	225/-
15.	**न्यायालयिक विज्ञान की नई चुनौतियां**	डा. शरद सिंह	200/-
16.	**मानवाधिकार संरक्षण एवं पुलिस**	श्री रामकृष्ण दत्त शर्मा एवं डा. सविता शर्मा	510/-
17.	**सामुदायिक पुलिस व्यवस्था**	डा. तपन चक्रवर्ती, डा. रवि अम्बष्ट	205/-
18.	**संगठित अपराध**	श्री महेन्द्र सिंह आदिल	313/-
19.	**पुलिस कार्यों का निजीकरण**	डा. शंकर सरौलिया	330/-
20.	**साइबर क्राइम**	डा. अनुपम शर्मा	450/-
21.	**अपराधों की रोकथाम और प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल**	डा. निशांत सिंह	545/-
22.	**अपराध पीड़ित महिलाओं की समस्याएं**	डा. ऋता तिवारी, डा. उपनीत लाली	775/-
23.	**वैध समस्याओं के निदान हेतु बढ़ती हिंसा प्रवृत्ति**	श्री राकेश प्रकाश	
24.	**आतंकवाद एवं जन साझेदारी**	श्री विश्वेश शर्मा	665/-
25.	**व्यावसायिक यौनकर्मियों का सुधार एवं पुनर्वास**	श्रीमती नीना लांबा	665/-
26.	**बंदियों का सुधार एवं पुनर्वास**	प्रो. दीप्ति श्रीवास्तव	665/-
27.	**नक्सलवाद और पुलिस की भूमिका**	श्री राकेश कुमार सिंह	1140/-
28.	**अपेक्षित परिवर्तन में महिलाओं की भूमिका**	डा. मंजू देवी	992/-
29.	**पर्यावरण और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण में पुलिस की भूमिका**	डा. पंकज श्रीवास्तव एवं नीतू मिश्रा	896/-

ब्यूरो द्वारा प्रकाशित उपरोक्त सभी पुस्तकें, नियंत्रक, प्रकाशन विभाग, सिविल लाइंस, दिल्ली-110054 से प्राप्त की जा सकती हैं।